संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

हिन्दी

वर्ष : १३
अंक : ११६
अगस्त २००२
श्रावण मास
विक्रम सं. २०५९

श्रीकृष्ण जन्माष्टमी
३१ अगस्त

गीतं मधुरं पीतं मधुरं भुक्तं मधुरं सुप्तं मधुरम् ।
रूपं मधुरं तिलकं मधुरं मधुराधिपतेरखिलं मधुरम् ॥

॥ ऋषि प्रसाद ॥

वर्ष : १३
अंक : ११६
९ अगस्त २००२
श्रावण मास, विक्रम संवत् २०५९
सम्पादक : कौशिक वाणी
सहसम्पादक : प्रे. खो. मकवाणा
मूल्य : रु. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत में
(१) वार्षिक : रु. ५०/-
(२) पंचवार्षिक : रु. २००/-
(३) आजीवन : रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में
(१) वार्षिक : रु. ७५/-
(२) पंचवार्षिक : रु. ३००/-
(३) आजीवन : रु. ७५०/-

विदेशों में
(१) वार्षिक : US $ 20
(२) पंचवार्षिक : US $ 80
(३) आजीवन : US $ 200

कार्यालय **'ऋषि प्रसाद'**
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.
e-mail : ashramamd@ashram.org
web-site : www.ashram.org

प्रकाशक और मुद्रक : कौशिक वाणी
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप और विनय प्रिन्टिंग प्रेस, अमदावाद में छपाकर प्रकाशित किया।

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्र-व्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

अनुक्रम

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग

SONY चैनल पर 'संत आसारामवाणी' सोमवार से शुक्रवार सुबह ७.३० से ८ व शनिवार और रविवार सुबह ७.०० से ७.३०
संस्कार चैनल पर 'परम पूज्य लोकसंत श्री आसारामजी बापू की अमृतवर्षा' रोज दोप. २.०० से २.३० तथा रात्रि १०.०० से १०.३०
***संकीर्तन* 'सोमवार तथा बुधवार सुबह ९.३० और मंगल तथा गुरुवार शाम ५.०० बजे**

बापू का प्रसाद

कितना सुन्दर है 'प्रसाद' यह !
सुबह-सुबह जो देते हो ।
पावन पवन भरा है बापू,
जो उपवन में देते हो ॥
मिटता घोर अँधेरा मन का,
जीवन निर्मल हो जाता है ।
वाणी शुद्ध-सरस हो जाती,
मधुर वचन जो देते हो ॥
व्यसन मिटे, सत्संग बढ़े,
यह 'ऋषि प्रसाद' पढ़ने से ।
जनम-जनम के कष्ट मिटें,
जो संत-सुधा तुम देते हो ॥
ज्ञानदीपिका, जीवन-दर्शन
भोग-मोक्ष की कुंजी है ।
बन सकता है नर नरेश,
आत्मज्ञान-सुमन जो देते हो ॥

- रामनरेश, एन. टी. पी. सी., उड़ीसा ।

* * *

संसार माँहीं कुछ सार नाहीं ।
क्यों डुबोता है भव सिंधु माँहीं ॥
आया जिसे ढूँढ़ने ढूँढ़ सो रे ।
आयु वृथा ही मत मूढ़ खो रे ॥
आया तमाशा करने यहाँ तू ।
कर्तार सच्चा बन है गया तू ॥
मैं तोर में तू जकड़ा हुआ है ।
तू आप ही बन्धन में पड़ा हुआ है ॥
पी मोह दारू नर है भुलाया ।
जाने नहीं है अपना पराया ॥
...य भूला फिरता फिरे है ।
ज्यों बांदरा नृत्य किया करे है ॥

- श्री भोले बाबा

विवेक की महिमा

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

विवेकी मनुष्य को संसार के भोगों से वैराग्य होता है और विषय-रस में नीरस बुद्धि होती है । 'संसार के भोग बाहर से कितने सुंदर, रसदायी और सुखदायी दिखते हैं किन्तु अंत में देखो तो कुछ भी नहीं...' ऐसा विचार विवेकी को होता है ।

जैसे मलिन वस्त्रों को साफ करने से उनका मैल निकल जाता है, वैसे ही वैराग्य से विकाररूपी भाव निकल जाते हैं और मन निर्मल हो जाता है । निर्मल मन में ही भगवद्रस प्रकट होता है, भगवान का आनंद प्रकट होता है और भगवान का सामर्थ्य आता है ।

जो विवेकी है वह जानता है कि 'अस्थि, मांस, मज्जा, रक्त, मल-मूत्रवाला यह शरीर मैं नहीं हूँ अपितु मैं आकाश से भी सूक्ष्म तथा व्यापक चैतन्य आत्मा हूँ ।'

बाल के अग्रभाग के लाख हिस्से करिये, उस लाखवें हिस्से के भी करोड़ भाग करिये, फिर भी वह चैतन्य आत्मा बाल के इस करोड़वें हिस्से से भी अधिक सूक्ष्म है और व्यापक इतना है कि पूरे आकाश को उसने ढाँप रखा है । वही परमेश्वर चैतन्य आत्मा मैं हूँ - ऐसा जो जानते हैं वे ही बड़भागी महापुरुष हैं ।

जो अपने को शरीर मानता है, जो अपने को जन्मने-मरनेवाला मानता है वह वेदान्त की दृष्टि में अज्ञानी है लेकिन जो अपने को शुद्ध-बुद्ध, चैतन्य आत्मा जानता है वही यथार्थ को जानता है और वही विवेकी है ।

जो सत्-असत् को देखता है और सत्-असत् को प्रकाशता है वह शिवात्मा मैं हूँ। मैं ही जीभ के द्वारा खारा-खट्टा आदि स्वाद लेता हूँ, मैं ही नेत्रों के द्वारा अच्छा-बुरा देखता हूँ, कोई मेरे शरीर को काट के टुकड़े-टुकड़े कर दे फिर भी जो नहीं मरता वह मैं हूँ। चाहे कितनी भी वाहवाही हो फिर भी जो बढ़ता नहीं है और चाहे कितनी भी निंदा हो तो भी जो घटता नहीं है वह साक्षी स्वरूप ''मैं'' हूँ - ऐसा जो जानता है वही सबको जानता है। ऐसे विवेकी महापुरुष महेश्वरस्वरूप होते हैं। वे तम-प्रकाश से परे, कामनाओं से परे, चैतन्यघन में स्थित रहनेवाले होते हैं।

जब एक बार उस चैतन्य परमेश्वर का ज्ञान हो जाता है, फिर कोई भी उस ज्ञान को छीन नहीं सकता। जैसे, तुम लोगों को यह ज्ञान हो गया कि यह घड़ी है, अब अगर मैं यह घड़ी छुपा दूँ तो इसका अदर्शन हो सकता है किंतु इसका ज्ञान तुमसे छीना नहीं जा सकता, क्योंकि तुमको एक बार इसका ज्ञान हो चुका है। ऐसे ही ज्ञानस्वरूप आत्मा का ज्ञान हो जाय तो फिर उसका अदर्शन हो सकता है, उसकी विस्मृति हो सकती है लेकिन उसका अज्ञान कभी नहीं हो सकता।

ज्ञान का फिर अज्ञान नहीं होता है। एक बार तुम्हें ज्ञान हो जाय कि तुम शुद्ध चैतन्यस्वरूप आत्मा हो फिर कोई तुम्हें बोले कि 'तुम फलाने के बेटे हो... फलानी के पति हो... फलाने के भाई हो... फलाने के बाप हो...' तो तुम व्यवहार में तो बोल दोगे कि 'हाँ भाई ! ठीक है।' परन्तु भीतर से तुम्हें पता होगा कि तुम वास्तव में क्या हो।

जिसे अपने वास्तविक स्वरूप का ज्ञान हो जाता है उस पुरुष के लिए राज्य करना, युद्ध करना, लाखों लोगों से सम्मानित होना अथवा भिक्षा माँगकर खाना सब खेल जैसा हो जाता है क्योंकि उसने जान लिया है कि सत्य केवल परमात्मा है, बाकी सब खिलवाड़मात्र है, स्वप्नमात्र है।

सुख-दुःख, मान-अपमान आदि सब आने-जानेवाले हैं। सुख भी सदा नहीं रहता और दुःख भी सदा नहीं रहता। मान भी सदा नहीं रहता और अपमान भी सदा नहीं रहता। जवानी भी सदा नहीं रहती और बुढ़ापा भी सदा नहीं रहता। मित्र भी सदा नहीं रहते और शत्रु भी सदा नहीं रहते। अमीरी भी सदा नहीं रहती और गरीबी भी सदा नहीं रहती - ये सब प्रकृति के परिवर्तनशील खिलवाड़ हैं।

जो सदा रहता है वह मेरा आत्मा ही सत्य है। पिछले जन्म के सगे-सम्बंधी, मित्र, धन-दौलत आदि इस जन्म में साथ नहीं हैं लेकिन वह परमात्मा तो जन्म-जन्मांतरों से हमारे साथ है। ऐसे ही इस जन्म के सगे-सम्बंधी, मित्र, धन-दौलत आदि भी हमारा साथ छोड़ देंगे लेकिन वह परमात्मा मरने के बाद भी हमारे साथ रहेगा... इसलिए उस परमात्मा के ही विषय में श्रवण करें और उसीका विचार करें तो बुद्धि आत्मविषयिणी हो जायेगी। आत्मविषयिणी बुद्धि होते ही धीरे-धीरे ईश्वरप्राप्ति की तड़प बढ़ती जायेगी।

फिर महापुरुषों से प्रार्थना करेंगे और कुछ अपना पुरुषार्थ करेंगे तो धीरे-धीरे बुद्धि उस सत्यस्वरूप परमात्मा में टिक जायेगी। अगर एक बार केवल तीन मिनट के लिए भी बुद्धि सत्य स्वरूप ईश्वर में टिक गयी तो फिर बुद्धि को कर्मबंधन नहीं रहता है। जैसे, एक बार पारस से लोहे की पुतली का स्पर्श हो गया, वह सोना हो गयी तो फिर उसे जंग नहीं लगता है।

जैसे साधारण आदमी को राग-द्वेष आदि का कर्मबंधन लगता है, वैसे उस मुक्तात्मा पुरुष को राग-द्वेष का कर्मबंधन नहीं लगता है। ऐसा मुक्तात्मा पुरुष संसार में रहते हुए भी संसार से न्यारा होता है।

धनभागी वे भी हैं जिन्हें महापुरुषों का सत्संग प्राप्त होता है, ईश्वरप्राप्ति में रुचि होती है। उनके समस्त तीर्थों, यज्ञों, तपों और पुण्यों का फल फलित हुआ है।

वे ही पहुँचे हैं जो रुके नहीं। जो अनुकूलता में फँसे नहीं और प्रतिकूलता से डरे नहीं, वे ही तो पहुँचे हैं। बगभगत तो रह गये, थोड़ी-सी उलझन में उलझ गये लेकिन सत्पात्र साधक तो मंजिल तय करके ही रहता है।

विषय-विकारों से वैराग्य करें...

❊ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ❊

'श्रीमद्भगवद्गीता' के तेरहवें अध्याय के आठवें श्लोक में आता है :

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च।
जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम् ॥

'इस लोक तथा परलोक के संपूर्ण भोगों में आसक्ति का अभाव और अहंकार का भी अभाव, जन्म, मृत्यु, जरा और रोग आदि में दुःख और दोषों का बार-बार विचार करना (यह ज्ञान है)।'

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यम्... इंद्रियों के अर्थ में वैराग्य करें। वैराग्य घृणा का नाम नहीं है, उपेक्षा का नाम वैराग्य नहीं है और द्वेषबुद्धि करने का नाम भी वैराग्य नहीं है। वरन् इंद्रियों के अर्थ में अर्थात् इंद्रियों के विषय में से राग हटाने का नाम वैराग्य है।

इंद्रियों का अर्थ है - 'विषय'। 'विषय' किसको बोलते हैं ? संस्कृत भाषा में जो जीव को बाँध ले अथवा जिसमें जीव बँध जाय, उसे 'विषय' कहते हैं और ये विषय पाँच हैं : शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंध। कहीं देखकर आसक्ति हो जाती है तो कहीं सूँघकर, कहीं चखकर आसक्ति हो जाती है तो कहीं सुनकर या स्पर्श करने पर... और यह आसक्ति ही जीव को बंधन में डालती है।

'इंद्रियों के अर्थ में' अर्थात् जब हम विषयों में आसक्ति करते हैं तब अनर्थ हो जाता है। इसीलिए भगवान कहते हैं कि **इन्द्रियार्थेषु वैराग्यम्...** इसका मतलब यह नहीं कि आप देखना, सुनना, चखना आदि बंद कर दो। नहीं, केवल उन विषयों से राग हटा दो।

विषय भी दो प्रकार के होते हैं :

पहला है, दृष्ट विषय - जैसा कि व्यासजी ने कहा है : खान-पान, पहनावा, ऐश्वर्य और स्त्री में आसक्ति, यह दृष्ट विषय है। जो दिखता है उसमें आसक्ति होना - यह दृष्ट विषय है।

दूसरा है, अदृष्ट विषय। जब मृत्यु होगी तब शरीर प्रकृति में लय हो जायेगा। लेकिन मरने के बाद बिहिश्त (स्वर्ग) मिलेगा, शराब के चश्मे मिलेंगे, हूरें (अप्सराएँ) मिलेंगी... ये अदृष्ट विषय हैं।

यहाँ के सुख-भोग का अर्थात् दृष्ट विषय का त्याग इसलिए किया कि स्वर्ग में सुख-भोग मिलेगा तो समझो तुम्हारी तपस्या स्वर्गीय सुख-भोग के लिए आरक्षित हो गयी। अतः दृष्ट और अदृष्ट दोनों विषयों से वैराग्य होना चाहिए।

वैराग्य उत्पन्न होता है विवेक से। विवेक क्या है ? ऐसा समझना कि सत्य क्या है, मिथ्या क्या है ? शाश्वत क्या है, नश्वर क्या है ? नित्य क्या है, अनित्य क्या है ? इसीका नाम विवेक है। विवेक से वैराग्य उत्पन्न होता है। यह संसार दिखनेभर को है, वास्तविक नहीं है। वास्तव में तो केवल एक परमात्मा ही सत्य है, शेष सब माया है, ऐसे विचार से विवेक जगता है।

संसार की चीजों की भी इच्छा न करें तथा स्वर्ग के सुख को पाने की भी इच्छा न करें वरन् केवल ईश्वर को ही पाने की इच्छा करें और जब ईश्वर के मार्ग पर चलने का एक बार मन में ठान लें, फिर घबरायें नहीं, पीछे हटें नहीं। मीराबाई ने एक बार ठान लिया तो चल पड़ी।

गुजराती में कहा गया है :

हरि नो मारग छे शूरा नो नहीं कायर नूं काम जोने।

ईश्वर का मार्ग कायरों का मार्ग नहीं है, यह शूरवीरों का मार्ग है। ५ साल के ध्रुव ने ठान लिया तो लग पड़ा और ईश्वर को पा के ही रहा। ११ साल के प्रह्लाद ने अनेक कष्ट झेले लेकिन ईश्वर को पाकर ही रहा...

भाई कहता था : ''समय से दुकान पर आया करो।''

मैंने कहा : ''अपने नियम पूरे करके ही आ सकता हूँ, नहीं तो यह चला।''

''अच्छा, १२ बजे तक आ जाना।''

''१२ बजे का वचन दिया है - इस चिंता में मैं नहीं रह सकता।''

''अच्छा, दिन में एक बार तो आ जाना।''

''नहीं।''

''अच्छा, सप्ताह में एक बार आ जाया करना।''

फिर सप्ताह में एक बार जाना भी हमको भारी पड़ने लगा तो हम घर छोड़-छाड़कर चल दिये।

एक बार दृढ़ निश्चय कर लो तो फिर उस पर डट जाओ।

भाई, भाई के दोस्त तो समझाते ही थे, साथ ही भाई अन्य व्यापारी लोगों से भी कहता कि 'इतना बढ़िया भाई है फिर भी शादी को मानता नहीं था... शादी करा दी तो दुकान पर नहीं आता है, संसारी नहीं बनता, पूजा के कमरे में बैठा रहता है, मंदिर में चला जाता है... आप लोग जरा समझाओ।'

तब व्यापारी लोग मुझे समझाने आते कि 'भाई! तुम सुधर जाओ। तुम्हारा एक ही भाई है।'

वे लोग मुझे अपने घर ले जाते और अपना पूजा का कमरा दिखाते हुए कहते : ''हम भी पूजा-पाठ करते हैं। हम तुमको पूजा करने से नहीं रोकते हैं। देखो, फलाने कैसे करोड़पति हो गये? तुम्हारी थोड़ी-सी युक्ति से भाई ऊँचा उठ रहा है। तुम जाने की बात करते हो तो बेचारा रोता है। तुम सुधर जाओ।''

मैंने कहा : ''बस, हम सुधर गये। हम जहाँ हैं वहीं ठीक हैं।''

दृष्ट और अदृष्ट से वैराग्य करें। वैराग्य का मतलब है स्त्री-पति, खान-पान आदि दृष्ट और स्वर्ग आदि के अदृष्ट विषयों के प्रति आकर्षण न होना। दोस्ती-दुश्मनी नहीं, ग्रहण-त्याग नहीं।

कुछ लोग त्यागी तो होते हैं लेकिन जड़ त्यागी होते हैं। एक ने कसम खा ली कि 'हम बिल्कुल त्यागी-वैरागी रहेंगे। किसी स्त्री ने छू लिया तो हम ५ दिन का उपवास करेंगे।'

फिर वह तपस्या करने चला गया। उसकी माँ को पता चला तो वह आयी और उसके सिर-कंधे पर हाथ घुमाते, सहलाते हुए बोली : ''बेटा! घर चल।'' बेटे ने तो कसम खा ली थी।

माँ भी तो स्त्री है। उसने ५ दिन का उपवास रखा। अरे! जिस माँ से तू पैदा हुआ उस माँ ने छू लिया तो क्या हुआ? ये है थोपा हुआ त्याग। राग तो फँसाता ही है थोपा हुआ त्याग भी एकतरफा बना देता है।

श्रीकृष्ण न तो मन-इंद्रियों के राग में फँस मरने को कहते हैं और न द्वेष में फँस मरने को कहते हैं। श्रीकृष्ण कहते हैं :

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहंकार एव च।

इंद्रियों के विषय में वैराग्य करें और अहंकार न करें। अहंकार किसी बात का न करें। न धन का अहंकार, न सौंदर्य का, न विद्वत्ता का, न सत्ता का, न पद का, न जाति का, न त्याग का, न वैराग्य का... किसीका भी अहंकार न करें। अहंकार तुम्हें एक सीमित दायरे में ले आयेगा और जब तुम सीमित दायरे में आ जाओगे तो व्यापक परमात्मा से दूर हो जाओगे...

आगे भगवान कहते हैं :

जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम्॥

जन्म-मृत्यु, जरा-व्याधि आदि में दुःख और दोषों का विचार करें।

जन्म लेते समय शिशु को कितना दुःख होता है?

जैसे कुम्हार के भट्ठे (आंवां) में घड़ा पकता है, वैसे ही गर्भाग्नि में शरीर पकता है। माता-पिता के द्रवरूपी रज-वीर्य से निर्मित अस्थि-मांसमय शरीर गर्भाग्नि में ही पककर बनता है। ८-१० माह तक शरीर का निर्माण होता है फिर जन्म के समय भी बड़ी पीड़ा होती है। इसी प्रकार मृत्यु भी कष्टदायी ही होती है और रोग तथा वृद्धावस्था कितनी कष्टदायी है यह तो सभी जानते ही हैं।

शरीर को कितना भी खिलाओ-पिलाओ, अंत में यह साथ नहीं देता। अतः इस शरीर के पीछे व्यर्थ समय नहीं गँवाना चाहिए वरन् संसार दुःखमय है और विकार दोषमय हैं - ऐसा विचार करके अपना समय और शक्ति सुखस्वरूप, चैतन्यस्वरूप, अपने शाश्वत आत्मस्वरूप की ओर लगाना चाहिए।
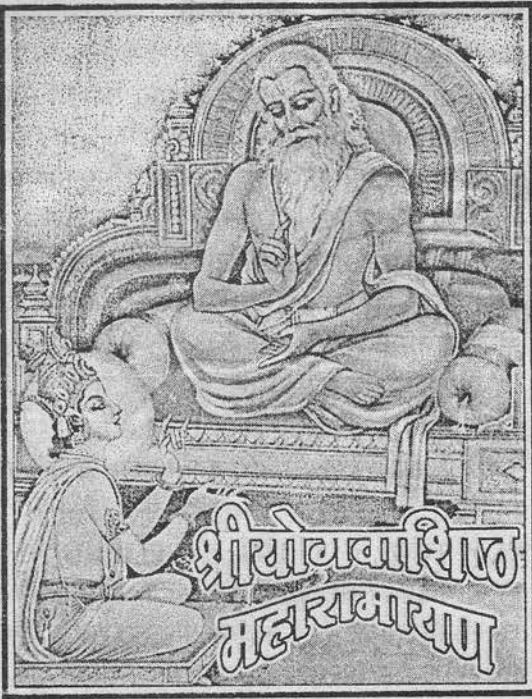
शम ही परम आनंद है...

※ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ※

श्री वशिष्ठजी महाराज कहते हैं :

''हे रामजी ! शम ही परम आनंद, परम पद और शिवपद है। जिस पुरुष ने शम को पाया है सो संसार-समुद्र से पार हुआ है। उसके शत्रु भी मित्र हो जाते हैं। हे रामजी ! जैसे चंद्र उदय होता है तब अमृत की किरणें फूटती हैं और शीतलता होती है, वैसे ही जिसके हृदय में शमरूपी चंद्रमा उदय होता है, उसके सब ताप मिट जाते हैं और वह परम शांतिमान हो जाता है।

शम देवतारूपी अमृत के समान कोई अमृत नहीं है। शम से परम शोभा की प्राप्ति होती है। जैसे पूर्णमासी के चंद्रमा की कांति परम उज्ज्वल होती है, वैसे ही शम को पाकर जीव की कांति उज्ज्वल होती है।

जिस पुरुष को शम की प्राप्ति हुई है वह वंदना करने योग्य और पूजने योग्य हो जाता है।''

जिसका शम सिद्ध हो गया अर्थात् जिसने मन को शांत करने की कला पा ली, वह वंदना करने योग्य और पूजने योग्य है। तुकारामजी महाराज की वंदना की जाती है, एकनाथजी महाराज का आदर होता है, ज्ञानेश्वर महाराज का दर्शन करने के लिए लोग कतार में खड़े रहते हैं क्योंकि ये सब शमवान पुरुष हैं।

मन को शांत करने का नाम **शम** है, इंद्रियों पर नियंत्रण पाने का नाम **दम** है, भगवान के रास्ते चलते हुए कठिनाइयाँ सहने का नाम **तितिक्षा** है, भगवान में आस्था रखने का नाम **श्रद्धा** है, बुद्धि को सब प्रकार से ब्रह्म में ही सदा स्थिर रखना **समाधान** है तथा भगवान के रास्ते में विघ्न डालनेवाले व्यसन और बुराइयों को त्यागने का नाम **उपरति** है। ईश्वर के रास्ते जाने के लिए जो दुर्गुण छोड़ दिये और फिर उनमें नहीं पड़े तो यह **उपरति** हो गयी। जिसके हृदय में ये छः गुण आ जाते हैं उसके हृदय में आत्मशांति आने लगती है और वह परम पद को पाने में सफल हो जाता है।

इसी आत्मशांति को पाने के लिए प्राचीन काल में बड़े-बड़े राजे-महाराजे राजपाट छोड़कर, सिर में खाक डालकर, हाथ में कटोरा लेकर भिक्षा माँगना स्वीकार करते थे। महापुरुषों की कृपा पाने के लिए राजे-महाराजे उनके आश्रम में बर्तन-भाँडे माँजते थे, झाड़ू-बुहारी करते थे... आत्मशांति ऐसी ऊँची चीज है !

जिन महापुरुषों के संपर्क से आत्मधन मिलता है, जिनसे आत्मशांति मिलती है, जो शमवान पुरुष हैं, उन महापुरुषों की भली प्रकार सेवा करनी चाहिए। उन महापुरुषों के आशीर्वाद हमारे हजारों जन्मों के पाप-ताप मिटाते हैं और लाखों-लाखों संस्कारों को निवृत्त करके भगवद्भक्ति का अंकुर उभारते हैं, हममें भगवत्प्राप्ति की प्यास जगाते हैं।

वशिष्ठजी महाराज कहते हैं : ''हे रामजी ! जैसा आनंद शमवान को होता है, वैसा अमृत पीनेवाले को भी नहीं होता।''

जो आनंद और शांति शमवान को होती है, वैसा आनंद और शांति अमृतपान करनेवाले देवताओं के पास भी नहीं होती। कैसी महिमा है शमवान पुरुष की !

तीन उपयोगी बातें

※ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ※

साधक के जीवन में तीन बातें होनी चाहिए : (१) दोषनिवृत्ति (२) गुणाधान (३) हीनांगपूर्ति।

शरीर को स्वच्छ करने के लिए स्नान किया जाता है - यह शरीर की दोषनिवृत्ति है । तेल लगाकर, बालों में कंघी करके, तिलक लगाकर, गहने-गाँठे, वस्त्रादि से उसको सँवारा जाता है - यह गुणाधान है और नकली दाँत, नकली बाल आदि लगाकर उसकी कमी को दूर किया जाता है - यह हीनांगपूर्ति है।

ऐसे ही आपके चित्त में जो दुर्गुण-दुराचार के संस्कार पड़े हैं उनको धर्मानुष्ठान के द्वारा, नियम-संयम के द्वारा निकालना - यह दोषनिवृत्ति है। मैत्री, करुणा, मुदिता, सहजता, सरलता, परोपकार आदि सद्गुणों को लाना - यह गुणाधान है और जिस कमी के कारण आप दीन-हीन तथा तुच्छ हो रहे हैं, जिस कमी के कारण आप जन्म-मृत्यु-जरा-व्याधि के शिकार हो रहे हैं, उस कमी को पूर्ण करना - यह हीनांगपूर्ति है और वह कमी है आत्मज्ञान की।

मनुष्य में कुछ-न-कुछ दोष होते ही हैं। उन दोषों को धर्मानुष्ठान, नियम-संयम तथा साधन-भजन से निकालें। दोषों को निकालते हुए मन में सद्गुणों को लायें, मन की आदत अच्छी बनायें। तत्त्वज्ञान के विचार से बुद्धि को चमकायें और ज्ञान-संयुक्त परमात्मा के ध्यान से उसकी हीनांगपूर्ति करें। साकार प्रभु या सोऽहं स्वभाव का ध्यान हमारे चित्त को शुद्ध करता है, हममें सद्गुण बढ़ाता है और हमारी कमियों की पूर्ति भी करता है।

यदि आप अपने दोषों को छिपाते हैं तो वे बढ़ते जाते हैं और यदि आप अपने दोषों की पोल महापुरुषों के आगे खोल देते हैं तो आपके दोष क्षीण हो जाते हैं।

इसी संदर्भ में एक घटित घटना :

काफी वर्ष पूर्व की बात है, माणेक चौक (अमदावाद, गुज.) के पास ढालगरवाड में प्रसिद्ध दुकान लक्की जूस हाऊस के मालिक हरिभाई ने परम पूज्य श्री आसारामजी बापू को अपनी सच्चाई बताते हुए कहा : ''बापूजी ! मैं आपको गोली मारने के लिए पिस्तौल खरीदना चाहता हूँ। हमारी एक 'गैंग' है। हमने आपको उड़ाने की 'प्लानिंग' की है।''

बापूजी ने पूछा : ''कहाँ पर उड़ाना चाहते हो ?''

''फलानी जगह पर।''

''केवल मुझे ही उड़ाना चाहते हो या किसी और को भी ?''

''आपके दो सचिवों को भी। बापूजी ! ऐसे विचार मेरे मन में आ रहे हैं। आप कृपा करके मुझे माफ करना और आप ही मुझे बचाना।''

''मैंने तुम्हारा क्या बिगाड़ा है ?''

''आपका इतना यश हमसे देखा नहीं जाता है।''

अब आपका प्रश्न हो सकता है कि 'उन्होंने बापूजी को मारा तो नहीं।'

बापूजी ने कहा : ''ठीक है, तुम्हारी इतनी सच्चाई है तो हम तुम पर नाराज नहीं हैं। हम तुम पर प्रसन्न हैं।''

निर्मल मन जन सो मोहि पावा।
मोहि कपट छल छिद्र न भावा॥

- श्रीरामजी (श्रीरामचरितमानस में)

कितना भी बड़ा दोष हो, अपराध हो अगर वह महापुरुषों के आगे प्रकट कर दिया जाय तो उनकी कृपा से वह दूर हो जाता है।

बापूजी प्रसन्न हुए तो उनकी तरफ से उसको (हरिभाई को) प्रेम मिला और प्रेम मिला तो उसको लगा कि बापूजी तो अपने हैं। भले इनका यश हो ! यश पराये का खटकता है, अपनेवाले का कैसे खटकेगा ? बापूजी अपने हो गये तो उसकी श्रद्धा भी विशेष हो गयी। फिर तो वह दुकानदारी की

शुरूआत भी बापूजी के चित्र को नमन करके करता और दुकान बंद करता तो भी बापूजी के चित्र को नमन करके...

सन् १९८५ में सांप्रदायिक दंगों के समय उपद्रवियों का एक टोला दुकानों को जलाता हुआ उसकी दुकान के नजदीक आया तो टोले के लोगों ने देखा कि 'आकाश में कोई छाया है।' वे बोल पड़े : ''तौबा-तौबा ! इस दुकान का रखवाला तो कोई फकीर है। यहाँसे चलो।''

जब उस टोले की 'तौबा-तौबा' करके वापस जाने की खबर उसको मिली तो उसकी श्रद्धा और बढ़ गयी। कहाँ तो पिस्तौल खरीद रहा था बापूजी को उड़ाने के लिए और कहाँ उसकी दुकान जलने से बच गयी ! उसने बापूजी से सारी घटना बताते हुए कहा : ''बापूजी ! आपकी बड़ी कृपा है।''

बापूजी ने कहा : ''नहीं, यह तो तुम्हारी सच्चाई का फल है। तुमने बाबा को अपना माना तो बाबा ने भी तुमको अपना माना और जिसको अपना माना उसे तो सँभालना पड़ता है !''

– सम्पादक

आप भगवान को अपना मानो तो इससे दोषनिवृत्ति में मदद मिलेगी, गुणाधान आसानी से होगा और हीनांगपूर्ति भी आसानी से होगी, क्योंकि भगवान पूर्ण हैं न !

भगवान निर्दोष हैं तो निर्दोष का चिंतन करने से दोष ज्यादा देर तक टिक नहीं सकेंगे। 'मुझमें दोष हैं... दोष हैं...' ऐसा चिंतन करोगे तो दोषों को बल मिलेगा। दोष होते हुए भी 'दोष नहीं हैं' ऐसा विचार कर गलती करते जाओगे तो अधोगति में जाओगे। किंतु 'मैं जैसा हूँ-तैसा हूँ, तेरा हूँ...' ऐसा करके भगवान का चिंतन करोगे तो दोषों से निवृत्त होने में मदद मिलगी।

दोषों का चिंतन भी न करो, दोषों का समर्थन भी न करो और न ही दोषों से लड़ो वरन् भगवान में मन लगा दो तो दोष निस्तेज हो जायेंगे। भगवान के चिंतन से गुणाधान हो जायेगा। अतः जो भी करते हो, लेते-देते हो सब भगवान के निमित्त करो इससे भगवान में प्रीति बढ़ेगी। जब भगवान में प्रीति होगी तो भगवद्तत्त्व की कथा सुनने की इच्छा होगी और कथा सुनने से हीनांगपूर्ति हो जायेगी...

जीवन में कोई भी दोष हो, उसे निकालने के लिए सुबह सूर्योदय से पूर्व नहा-धोकर, पूर्वाभिमुख होकर आसन पर बैठ जाओ और लंबा श्वास लो। श्वास पूरा भरकर फिर संकल्प करो कि 'आज इस दोष का गुलाम नहीं बनूँगा।' फिर उस दोष के विपरीत गुण का चिंतन करो। मान लो, आपके जीवन में आलस्य है तो... 'मैं आज आलस्य नहीं करूँगा... आज मैं स्फूर्ति में रहूँगा...'

आलस कबहूँ न कीजिये आलस अरि सम जानि।
आलस ते विद्या घटे बल बुद्धि की हो हानि॥

यदि आपके जीवन में काम-क्रोध-लोभ-मोह आदि कोई भी विकार है, कोई बीमारी या व्यसन है तो उसके विपरीत विचार करो : 'ॐ... ॐ... ॐ... हरि ॐ... आज के दिन मैं अमुक विकार में नहीं गिरूँगा... इन दोषों को मैं ही बल देता था, तभी ये मुझ पर हावी थे। अब मेरा बल मेरे प्रभु राम के, आत्मा-परमात्मा के चरणों में समर्पित है और राम का बल मेरे अंतःकरण में स्थित है... हम और तुम, दोष सारे गुम... ॐ... ॐ... ॐ... हरि ॐ...'

इस प्रकार १०-१५ मिनट रोज करने से शराबी की शराब, जुआरी का जुआ खेलना, बीमार की बीमारी आदि दोष-दुर्गुण दूर हो सकते हैं।

मान लो, कोई बीमारी है तो इस प्रयोग के साथ संकल्प करो कि 'मैं निरोग हूँ... मैं स्वस्थ हूँ... ॐ निरोगता... ॐ आरोग्यता... ॐ... ॐ... ॐ...' इस प्रकार का प्रयोग शारीरिक बीमारी तो मिटाता ही है, मानसिक रोगों को भी नष्ट करता है और बुद्धि की कमजोरी को दूर करके बुद्धि में गुणाधान भी करता है।

स्नेही और शत्रु को भी आरोग्यता के भाव भेजो। जो दोगे वही मिलेगा। शत्रु के प्रति भी अशुद्ध भाव से युक्त शब्द, घृणा के भाव न भेजो। शुद्ध भाव से युक्त शब्द, सद्भाव भेजो। इससे शत्रुओं का शत्रुत्व भी आपको हानि नहीं पहुँचा सकता।

इस प्रकार आप किसी दोष विशेष से एक दिन बच गये तो दूसरे दिन भी उससे बचने में मदद मिलेगी और तीसरे दिन भी। इस तरह रोज-रोज अपना संकल्प दुहराते जाओ और उस दोष का

चिंतन करने के बदले में उसके विपरीत गुण का चिंतन करते जाओ ताकि वह दोष याद ही न आये।

दुश्मन को भूलने के लिए सज्जन से प्रीति कर लो, दुर्गुणों को भूलने के लिए सद्गुणों को भर दो, नश्वर शरीर को 'मैं' मानने के बदले शाश्वत परमात्मा को 'मैं' मान लो तो काम बन जायेगा, बेड़ा पार हो जायेगा...

*

दो प्रकार के मनुष्य

दो तरह की मक्खियाँ होती हैं, एक मक्खी हमारे मुँह पर बैठती है, नाक पर बैठती है, गंदगी पर बैठती है। उसे सुगंध दो तब भी सुगंधित वस्तु पर नहीं बैठेगी। दूसरी मक्खी होती है, मधुमक्खी - उसको कीचड़ पर, गंदगी पर हज़ार बार बिठाने की कोशिश करो, फिर भी वह वहाँसे भागेगी और फूलों पर जा बैठेगी। जहाँ रस होगा, जहाँ पर सुगंध होगी वहाँ वह जा बैठेगी।

एक मक्खी गंदगी पर बैठती है और दूसरी सुगंधित पुष्पों पर बैठती है।

हमें कीचड़ में बैठनेवाली मक्खी की नाईं नहीं होना है बल्कि फूल पर बैठनेवाली मधुमक्खी की नाईं होना है। रामकृष्णदेव ने कहा कि : ''ठीक इसी तरह दो प्रकार के मनुष्य होते हैं। एक ऐसे होते हैं जिनसे अगर हमने हालचाल पूछ लिया तो वे थोड़ी देर में, बातों-बातों में खुद को और हमको घुमाकर संसार की तरफ ले जायेंगे। दूसरे लोग वे होते हैं जिनसे संसारी लोग थोड़ी बात करें तो वे खुद गुरु की बात ले आते हैं, ईश्वर की बात ले आते हैं।''

हरि कथा ही कथा, बाकी सब जग की व्यथा।

चाहे कितनी भी संसार की बातें कर लो, फिर भी वे अपूर्ण रहेंगी, कभी पूरी होनेवाली नहीं हैं। किंतु थोड़ी देर भी अगर भगवान की चर्चा करते हो, गुरु की चर्चा करते हो, सत्संग की चर्चा करते हो तो हृदय दिव्यता, आनंद और आह्लाद से भरने लगता है। संसार की बात से राग-द्वेष, भव-शोक, ईर्ष्या, आसक्ति, ग्लानि, घृणा आती है। परमात्मा की बातों से उदारता, नम्रता, प्रसन्नता, भक्ति व परमात्म-रस आता है। भगवद्भाव पुष्ट होने लगता है।
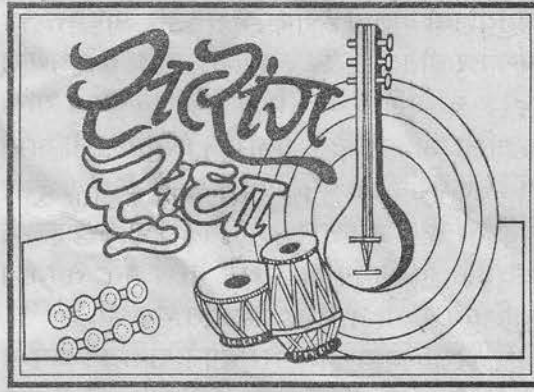
सनातन धर्म की महिमा

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

सनातन धर्म की स्थापना किसी साधु-संत, जती-जोगी या तपस्वी ने की, ऐसी बात नहीं है। यहाँ तक कि भगवान श्रीराम, श्रीकृष्ण या अन्य अवतारों ने भी सनातन धर्म की स्थापना नहीं की है बल्कि श्रीराम और श्रीकृष्ण जैसी विभूतियाँ सनातन धर्म में प्रकट हुई हैं। सनातन धर्म तो उनके पूर्व भी था।

वशिष्ठजी महाराज ने बताया कि इस तरह का यज्ञ करो और उसमें शृंगी ऋषि को आमंत्रित करो क्योंकि वे बड़े संयमी हैं। यज्ञ में आहुति देनेवाले जितने अधिक संयमी-सदाचारी होते हैं, यज्ञ उतना ही प्रभावशाली होता है। शृंगी ऋषि को लाना बड़ा कठिन कार्य था। बड़े यत्न से उन्हें लाया गया। उनके द्वारा यज्ञ संपन्न हुआ, यज्ञपुरुष खीर का कटोरा लेकर प्रकट हुए। वह दैवी प्रसाद माँ कौशल्या, कैकेयी और सुमित्रा ने लिया। उसीसे भगवान श्रीराम, लक्ष्मण, भरत और शत्रुघ्न का प्राकट्य हुआ।

सनातन धर्म श्रीराम के पहले था तभी तो यह व्यवस्था हुई।

४,३२,००० वर्ष बीतते हैं तब कलियुग, ८,६४,००० वर्ष बीतते हैं तब द्वापरयुग, १२,९६,००० वर्ष बीतते हैं तब त्रेतायुग और १७,२८,००० वर्ष बीतते हैं तब सतयुग पूरा होता है। इस प्रकार कुल मिलाकर ४३,२०,००० वर्ष बीतते हैं तब एक चतुर्युगी मानी जाती है। ऐसी ७१

चतुर्युगियाँ बीतती हैं तब एक मन्वंतर और ऐसे १४ मन्वंतर बीतते हैं तब एक कल्प होता है। अर्थात् ९९४ चतुर्युगियाँ बीतती हैं तब एक कल्प यानी ब्रह्माजी का एक दिन होता है। ऐसे ब्रह्माजी अभी ५० वर्ष पूरे करके ५१वें वर्ष के प्रथम दिन के दूसरे प्रहर में हैं। अर्थात् सातवाँ मन्वंतर, अट्ठाइसवीं चतुर्युगी, कलियुग का प्रथम चरण चल रहा है। कलियुग के भी ५,२२८ वर्ष बीत चुके हैं।

जैसा दिव्य इतिहास हमने सनातन धर्म में देखा, वैसा और किसी संस्कृति अथवा धर्म में आज तक नहीं देखा-सुना।

सनातन धर्म और वेद अपौरुषेय हैं अर्थात् उनका प्राकट्य किसी पुरुष के द्वारा नहीं हुआ है।

अनेक पाश्चात्य विद्वानों ने भी भारतीय संस्कृति और भारतीय दर्शन की महिमा का खुले दिल से गान किया है।

पादरी लैडविटर (थियोसाफिकल सोसायटी के मान्य संत) ने कहा है : ''भारतीय संस्कृति का अध्ययन करने से पूर्व आंतरिक संतोष नहीं मिला था। ईसाई और इस्लाम मत में श्रद्धा तो दिखी, पर विवेक की तुष्टि नहीं हुई। पाश्चात्य दर्शन में विवेक मिला, पर संवेदनाओं की प्यास न बुझी। भारतीय दर्शन में दोनों का योग है, यह वास्तव में योगी है।''

जर्मनी के प्रसिद्ध दार्शनिक **शोपेनहावर** ने कहा है : ''विश्व के संपूर्ण साहित्यिक भंडार में से किसी ग्रंथ का अध्ययन मानव-विकास के लिए इतना उपयोगी और ऊँचा उठानेवाला नहीं है जितना कि उपनिषदों की विचारधारा का अवगाहन। इस सागर में डुबकी लगाने से मुझे शांति मिली है तथा मृत्यु के समय भी शांति मिलेगी।''

दाराशिकोह (औरंगजेब के बड़े भाई) उपनिषदों का अध्ययन करते थे। एक दिन वे मस्ती में झूम रहे थे। उनकी भतीजी ने पूछा :

''चचा जान ! आप नशा तो करते नहीं हैं, फिर ऐसे मस्त कैसे हो रहे हैं ?''

दाराशिकोह : ''बेटी ! यह मस्ती नशे की नहीं, दिव्य ज्ञान की है। उपनिषदों को पढ़ने के बाद मुझे अनुभव हो रहा है कि आत्मज्ञान की मस्ती कितनी गहरी होती है !''

फ्रांस के इतिहास-लेखक **विक्टर कजीन** ने कहा है :

''परमेश्वर का वास्तविक ज्ञान प्राचीन हिन्दू रखते थे, इस बात से कभी इन्कार नहीं हो सकता है। उनका दर्शनशास्त्र (तत्त्वज्ञान), उनके विचार इतने उत्कृष्ट, इतने उच्च, इतने यथार्थ और सच्चे हैं कि यूरोपीय लेखों से उनकी तुलना करना ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे ठीक मध्याह्नकालीन सूर्य के पूर्ण प्रकाश में स्वर्ग से चुरायी हुई प्रोमीथीयन आग (Promethean fire) का झुटपुटा उजाला !

जब हम ध्यानपूर्वक पूर्वीय, विशेष करके भारतवर्षीय काव्य और दर्शनशास्त्र की पुस्तकें पढ़ते हैं, जिनका विस्तार और प्रचार अभी-अभी यूरोप में होने लगा है, तब हमें उनसे बहुत-सी सच्चाइयाँ मिलती हैं और वे सच्चाइयाँ ऐसी हैं कि यूरोपीय दर्शन के निष्कर्ष उनकी तुलना में बिल्कुल हेच (तुच्छ) ठहरते हैं। यूरोपीय बुद्धि की अपंगता और भारतीय दर्शन की गंभीरता ऐसी महान है कि हमें पूर्व (भारत) के दर्शनशास्त्र के सामने मजबूरन घुटने टेकने पड़ते हैं।''

पाश्चात्य दार्शनिक **श्लेगल** ने लिखा है :

''हिन्दू विचार के मुकाबले में यूरोपीय दर्शनशास्त्र की सर्वोच्च डींगें ऐसी प्रतीत होती हैं जैसे विराट पुरुष के सामने एक बावन अंगुल का बौना !''

वेदान्त दर्शन के विषय में **श्लेगल** का कहना है : ''मनुष्य का दिव्य स्वरूप उसे निरंतर इसलिए समझाया और चित्त में धारण कराया जाता है कि इससे मनुष्य अपने स्वरूप की ओर लौटने के लिए परिश्रम की पराकाष्ठा करे, इस जीवन-प्रयास में अपने को सजीव प्रोत्साहित करे तथा अपने को इस विचार में प्रवृत्त करे कि प्रत्येक व्यापार, उद्यम का एकमात्र मुख्य उद्देश्य अपने निजस्वरूप (आत्मा) से पुनः मिलाप और योग प्राप्त करना है।''

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

आखिर यह सब कब तक ?

जापान के एक सम्राट ने वजीर से कहा :

''मुझे ऐसी कोई युक्ति बताओ कि मैं सदा सुख में मस्त रहूँ।''

वजीर ने कहा : '' ऐसी युक्ति मैं नहीं बता सकता। यह युक्ति तो संतों के पास मिलेगी।''

जापान नरेश किसी संत के पास गया और उन्हें प्रणाम करके बोला : ''महाराज ! ऐसी कृपा करो कि मैं सदा एक जैसे सुख में मस्त रहूँ। अभी मैं बड़े मजे में हूँ लेकिन भय लगता है कि कहीं यह राज्य न छूट जाय, यह मौसम न बदल जाय, मुकद्दर की यह गाड़ी कहीं पटरी न बदल दे, ये सुहावनी प्रभातें कहीं खो न जायें... बाबाजी ! कुछ ऐसी कृपा करो कि यह भाग्य की प्रभात सदा ऐसी ही बनी रहे।''

संतश्री ज्ञानवान थे। उठकर कुटिया में गये। थोड़ी देर शांत होकर भोजपत्र पर कुछ लिखा और उसे लपेटकर ताबीज में डाल दिया। संतश्री कुटिया से बाहर आये और राजा से कहा :

''यह ताबीज गले में बाँध लो। जब तुम अपने-आपको बहुत सुखी महसूस करो, बहुत आनंदित होओ, पूरे निश्चिंत होओ तथा अपने को सबसे ज्यादा सौभाग्यशाली मानकर भाग्य के शिखर पर खड़े मानो, तब इस ताबीज को खोलकर पढ़ लेना और जब तुम अत्यंत दुःखी हो जाओ, भाग्य की प्रभात मध्यरात्रि में बदलती नजर आये, चारों ओर अँधेरा-ही-अँधेरा दिखायी देता हो, तब भी इस ताबीज को खोलकर पढ़ लेना।''

दुःख के बादल आते हैं तो चारों तरफ से आते हैं और सुख की घड़ियाँ आती हैं तो वे भी चारों ओर से आती हैं। आदमी जब विजयी होने लगता है तो सब तरफ से होने लगता है और पराजित होने लगता है तब भी चारों तरफ से पराजित होने लगता है। फिर भी सुख के प्रसंग में मनुष्य को न तो अत्यंत हर्षित होना चाहिए, न ही दुःख के प्रसंग में अत्यंत शोकातुर होना चाहिए।

गम की अँधेरी रात में दिल को न बेकरार कर।
सुबह जरूर आयेगी सुबह का इंतजार कर॥

संतश्री का दिया हुआ ताबीज जापान नरेश ने सँभालकर रख लिया।

एक दिन वह अपने महल में शांति से बैठा था। उसने देखा कि : 'अहाहा... कितनी सुहानी सुंदर वसंत ऋतु है ! न कड़कड़ाती ठंड है न पसीना बहानेवाली ग्रीष्म ऋतु... ठंड गयी और गर्मी आने को है... सुंदर-सुहावने फूल खिल रहे हैं... मैं कितना सुखी हूँ ! वाह, वाह... तख्त पर बैठा हूँ... सुंदरियाँ चँवर डुला रही हैं... सुंदर गान की आवाज आ रही है... मैं बहुत भाग्यशाली हूँ !' इतने में उसे संतश्री की बात याद आयी, अंदर गया, अलमारी में से ताबीज निकाला और खोलकर संदेश पढ़ा। उसमें लिखा था : **'आखिर यह सब कब तक ?'**

कह रहा है आसमाँ यह समाँ कुछ भी नहीं।
रोती हैं शबनम कि नैरंगे जहाँ कुछ भी नहीं॥
जिनके महलों में हजारों रंग के जलते थे फानूस।
झाड़ उनकी कब्र पर है और निशाँ कुछ भी नहीं॥
जिनकी नौबत से सदा गूँजते थे आसमाँ।
दम बखुद है कब्र में अब हूँ न हाँ कुछ भी नहीं॥
तख्तवालों का पता देते हैं तख्ते गौर के।
खोज मिलता तक नहीं वादे अजां कुछ भी नहीं॥

आखिर बाहर का सुख, बाहर की पदवियाँ कब तक टिकेंगी ? शरीर भी एक दिन जल ही जायेगा। उस संत के वैराग्य-भरे हाथों से लिखे हुए अक्षर को पढ़कर राजा का अहं बैठ गया, चित्त

शांत हो गया।

उसे याद आ गया कि मैं भले बहुत सुखी दिखता हूँ परन्तु छोटी रानी को लड़का हुआ है तो उससे और रानियाँ जलती हैं... । इतने में वजीर ने आकर बताया : ''पड़ोसी राजा आपस में मिल गये हैं और अपने सेनापतियों में फूट पड़ गयी है।''

इधर घर का मामला और उधर राज्य का... जिन पत्नियों के सहयोग, दासियों का चँवर डुलाना, वजीरों की सूझबूझ और सेनापतियों के विश्वास के कारण वह अपने को भाग्यशाली मानता था वह सब अब छूटता जा रहा था, एकाएक उसके विपरीत होने लगा था...

सुख देनेवाली ये सब चीजें बाहर की हैं और दुःख भी बाहर का है। बाहर की चीजें मिलती हैं तब सुख और बिछुड़ती हैं तब दुःख होता है। वह दुःख कल्पना से होता है, आत्मा में कोई सुख-दुःख नहीं होता। 'अनुकूलता में सुखवृत्ति हुई, प्रतिकूलता में दुःखवृत्ति हुई - उन्हें देखनेवाला मैं आत्मा हूँ' - ऐसा दृढ़ ज्ञान जिसे हो जाता है उस पर सुख-दुःख की अवस्थाओं का प्रभाव नहीं पड़ता।

सम्राट को हुआ कि 'चारों तरफ से शत्रुओं ने घेर लिया है, महल का अन्दरूनी माहौल भी नफरत, द्वेष, कलह से विकृत हुआ है। हे भगवान ! मेरी सारी इज्जत-आबरू मिट्टी में मिल गयी। अब मैं क्या करूँ ?' फिर उसे याद आयी ताबीज की... उसने पुनः ताबीज निकालकर पढ़ा : **'आखिर यह सब कब तक ?'**

अरे, वीर्य की बूँद से बेटे-बेटी बने हैं उन्हें मेरा बेटा-मेरी बेटी मानकर हम चिंतित हो रहे हैं। 'आखिर यह सब कब तक ?'

जब सुख आया तब ताबीज पढ़ा था तो उसमें लिखा था कि 'आखिर यह सब कब तक ?' और दुःख के समय ताबीज पढ़ा तब भी यही लिखा था।

राजा का चित्त शांत हो गया। संत के एक वचन ने उसके हृदय को परिवर्तित कर दिया।

आप भी अपने जीवन में लेते-देते, खाते-पीते, हँसते-रोते यदि यह विचार करें कि आखिर यह सब कब तक ? तो आपके लिए भी इस जग के जंजाल से मुक्ति पाना आसान हो जायेगा...

धनभागी हैं वे लोग जो संत महापुरुषों के वचनों को समझ पाते हैं और अपने जीवन में उतार पाते हैं। अगर संत महापुरुष का एक वचन भी इस प्रकार आत्मसात् हो जाय तो बेड़ा पार हो जाय... •

*

चोर हुए अंधे...

सन् १५९५ में मारवाड़ (राज.) के बिलाड़ा परगने के भावि ग्राम में जन्म लेनेवाले भलराजजी बाल्यकाल से ही भक्ति के रंग में रँगे हुए थे। भगवान को सबमें और सबको भगवान में देखनेवाले उन भलराजजी की साधु-संतों में बड़ी प्रीति थी। कैसे भी करके वे साधु-संतों की सेवा में लगे रहते थे।

एक बार साधुओं की टोली में स्वयं भगवान एक बूढ़े साधु का रूप लेकर उनके घर आये। गरीब भलराजजी के यहाँ अन्न-धन की कमी के कारण साधुओं के स्वागत का प्रश्न उठ खड़ा हुआ। उनकी पत्नी अपने सब गहने एक-एक करके पहले ही बेच चुकी थी। आखिर में जो पायल बची थी उसको बेचकर इस बार आटा-दाल आदि लाकर साधुओं का सत्कार किया। जाते-जाते बूढ़े साधु के वेश में आये हुए भगवान ने भलराजजी को मुट्ठीभर दाने दिये और कहा :

''इन्हें कोठार में रख दे। कभी नहीं घटेंगे और अपने घर के द्वार सदा खुले रखना। तुम्हारे यहाँ कभी चोरी नहीं होगी।''

साधुवेश में वे साधुओं के साधु भगवान नारायण तो चलते बने।

एक बार भलराजजी के गाँव में डकैत आये। सब घरों को लूटते हुए जब इनके घर में आये तो डकैत अंधे हो गये। आखिर डकैतों ने पश्चाताप से भरकर भलराजजी से माफी माँगी तथा दुबारा डाका न डालने का वचन दिया और लूट का सामान गाँववालों को लौटा दिया।

उस बूढ़े साधु के रूप में आये भगवान की ही लीला थी कि उनके घर में कभी अन्न-धन की कमी नहीं हुई । चारभुजाजी का मंदिर उन्हीं भलराजजी का बनवाया हुआ है । सौ वर्ष की आयु भोगकर सन् १६९५ में माघ शुक्ला पंचमी के दिन भावि ग्राम के तालाब की पोल पर उन्होंने जीते-जी समाधि ले ली ।

वे संतपुरुष आज भले शरीर से नहीं दिखते हैं लेकिन अपनी भक्ति और ज्ञान से तो आज भी लोगों के हृदय में विराजमान हैं ।

✲

युधिष्ठिर का प्रश्न

युधिष्ठिर ने पितामह भीष्म से पूछा : ''कोई मनुष्य नीतिशास्त्र का अध्ययन करके भी नीतिज्ञ नहीं देखा जाता और कोई नीति से अनभिज्ञ होने पर भी मंत्री के पद पर पहुँच जाता है, इसका क्या कारण है ? कभी-कभी विद्वान और मूर्ख दोनों की एक-सी स्थिति होती है । खोटी बुद्धिवाले मनुष्य धनवान हो जाते हैं और अच्छी बुद्धि रखनेवाले विद्वान को फूटी कौड़ी भी नसीब नहीं होती ।''

भीष्मजी बोले : ''बीज बोये बिना अंकुर नहीं पैदा होता । मनीषी पुरुषों का कहना है कि **मनुष्य दान देने से उपभोग की सामग्री पाता है । बड़े-बूढ़ों की सेवा करने से उसको उत्तम बुद्धि प्राप्त होती है और अहिंसा-धर्म के पालन से वह दीर्घजीवी होता है ।** इसलिए मनुष्य को चाहिए कि स्वयं दान दे, दूसरों से याचना न करे, धर्मनिष्ठ पुरुषों की पूजा करे, मीठे वचन बोले, सबका भला करे, शान्तभाव से रहे और किसी भी प्राणी की हिंसा न करे ।

युधिष्ठिर ! डाँस, कीड़े और चींटी आदि जीवों को उन-उन योनियों में उत्पन्न करके सुख-दुःख की प्राप्ति कराने में उनका अपना किया हुआ कर्म ही कारण है, यह सोचकर अपनी बुद्धि को स्थिर करो और सत्कर्म में लग जाओ ।

मनुष्य जो शुभ तथा अशुभ कर्म करता और दूसरों से कराता है, उन दोनों प्रकार के कर्मों में से शुभ कर्म का अनुष्ठान करके तो उसे प्रसन्न होना चाहिए और अशुभ कर्म हो जाने पर उससे किसी अच्छे फल की आशा नहीं रखनी चाहिए । जब धर्म

का फल देखकर मनुष्य की बुद्धि में धर्म की श्रेष्ठता का निश्चय हो जाता है, तभी उसका धर्म के प्रति विश्वास बढ़ता है और तभी उसका मन धर्म में लगता है। जब तक धर्म में बुद्धि दृढ़ नहीं होती, तब तक कोई उसके फल पर विश्वास नहीं करता है।

प्राणियों की बुद्धिमत्ता की यही पहचान है कि वे धर्म के फल में विश्वास करके उसके आचरण में लग जायें। जिसे कर्त्तव्य और अकर्त्तव्य दोनों का ज्ञान है, उस पुरुष को एकाग्रचित्त होकर धर्म का आचरण करना चाहिए। जो अतुल ऐश्वर्य के स्वामी हैं, वे यह सोचकर कि कहीं रजोगुणी होकर हम पुनः जन्म-मृत्यु के चक्कर में न पड़ जायें, धर्म का अनुष्ठान करते हैं और इस प्रकार अपने ही प्रयत्न से आत्मा को महत् पद की प्राप्ति कराते हैं।

काल किसी तरह धर्म को अधर्म नहीं बना सकता अर्थात् धर्म करनेवाले को दुःख नहीं देता, इसलिए धर्मात्मा पुरुष को विशुद्ध आत्मा ही समझना चाहिए। धर्म का स्वरूप प्रज्वलित अग्नि के समान तेजस्वी है। काल उसकी सब ओर से रक्षा करता है। अतः अधर्म में इतनी शक्ति नहीं कि वह धर्म को छू भी सके। विशुद्धि और पाप के स्पर्श का अभाव - ये दोनों धर्म के कार्य हैं। धर्म विजय की प्राप्ति करानेवाला और तीनों लोकों में प्रकाश फैलानेवाला है।

अतः अपना मंगल चाहनेवाले, भविष्य उज्ज्वल चाहनेवालों को प्रयत्नपूर्वक दान, संयम, सुमिरन, जीवों पर दया, सत्संग आदि धर्म-कार्यों में लगे रहना चाहिए। उनका शुभ फल परिपाक होने पर अवश्य मिलता है।

*

धर्मो रक्षति रक्षितः

*** संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ***

काशी नगरी में धर्मपाल नामक एक ब्राह्मण रहता था। वह बड़ा सदाचारी और धर्मपरायण था। उसके घर के नौकर-चाकर भी बड़े सदाचारी, दानी तथा व्रत-उपवास परायण थे।

धर्मपाल ने अपने इकलौते पुत्र को तक्षशिला महाविद्यालय में पढ़ने भेज दिया। वहाँ पाँच सौ विद्यार्थी थे। थोड़े ही दिनों में वह सबसे आगे निकल गया।

एक दिन उसके आचार्य का एक युवा पुत्र किसी बीमारी से मर गया। आचार्य तो दुःखी थे ही, पर धर्मपाल के पुत्र को छोड़कर उनके सभी शिष्य भी दुःखी होकर रोने लगे।

अग्निसंस्कार करके जब सब लौटे तो परस्पर बातें करने लगे कि 'देखो, कैसा युवा लड़का था, बेचारा चल बसा।' धर्मपाल का पुत्र भी वहीं बैठा सबकी बातें सुन रहा था। सब लड़के उसकी तरफ देखकर बोले : ''यह कैसा नास्तिक है ? आचार्य का पुत्र मर गया है और इसे रोना भी नहीं आ रहा है !''

आखिर आचार्य के कानों तक बात गयी। आचार्य ने उसे बुलाकर पूछा :

''मेरा बेटा मर गया तो सब रोये। मुझे भी रोना आया फिर भी तुझे रोना क्यों नहीं आया ? तेरे चेहरे पर दुःख नहीं झलकता वरन् शांति है, क्या बात है ?''

लड़के ने कहा : ''मैंने सुना है कि पाप के फल से रोना आता है। मैंने कोई पाप नहीं किया है इसीलिए मुझे रोना नहीं आता।''

देखो, ध्यान में रोना आये तो उसको पाप का फल मत समझना। ध्यान में रोना आये और कोई सोचे कि 'कहीं हमको पापी की गिनती में तो नहीं गिन लेंगे ?' नहीं, ध्यान का रुदन पाप का फल नहीं है, विरह है।

आचार्य ने कहा : ''मेरा बेटा मर गया। यह क्या पाप का फल है ?''

लड़का बोला : ''आपने इस जन्म में अथवा पूर्वजन्म में ऐसा कोई कर्म किया होगा, तभी आपके जीते-जी आपका युवा पुत्र मर गया।''

आचार्य को आश्चर्य हुआ। एक व्यक्ति को विद्यालय का भार सौंपकर बकरे की कुछ हड्डियाँ साथ में लीं और काशी की ओर चल पड़े। पता लगाते-लगाते किसी तरह धर्मपाल के गाँव में पहुँच गये। धर्मपाल को बकरे की हड्डियों का अस्थि-कलश बताकर आचार्य ने कहा :

''धर्मपाल ! तुम्हारा पुत्र मेरे पास पढ़ता था,

वह सहसा चल बसा है। यह रहे उसके फूल, गंगाजी में डालने के लिए चलो।''

क्षणभर के लिए तो लड़के के माता-पिता चुप हो गये। फिर धर्मपाल बड़े जोरों-से हँस पड़े और बोले : ''महाराज ! कोई दूसरा मरा होगा। हमारे यहाँ तो सात पीढ़ियों से आज तक कोई भी युवा नहीं मरा। ये हड्डियाँ तो किसी बकरे-कुत्ते की होंगी। हमारे यहाँ तो ऐसा होता ही नहीं।''

आचार्य : ''क्यों ?''

धर्मपाल : ''हमने ऐसा कोई पाप नहीं किया है कि हमारे जीते-जी हमारा बेटा मरे।''

अन्त में आचार्य ने सारा भेद खोला और धर्मपाल से उनके यहाँ युवावस्था में किसीके न मरने का कारण पूछा ।

धर्मपाल : ''महाराज ! हम धर्म का आचरण करते हैं, पाप कर्मों से दूर रहते हैं। सत्य बोलते हैं, असत्य से दूर रहते हैं। सत्संग करते हैं, दुर्जन से दूर रहते हैं। दान देते समय मीठे वचन बोलते हैं। भिक्षुक, ब्राह्मण, प्रवासी, याचक, दरिद्र - इन सबको अन्न-जल से संतुष्ट रखते हैं। हमारे यहाँ के पुरुष पत्नीव्रत और स्त्रियाँ पतिव्रत का पालन करती हैं। इसी कारण धर्म हमारी रक्षा करता है और हमारे यहाँ अल्पावस्था में कोई भी मौत के मुँह में नहीं जाता।''

शास्त्रों में भी आता है कि जो धर्म की रक्षा करता है, धर्म उसकी रक्षा करता ही है।

धर्मो रक्षति रक्षितः।

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाकद्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी । अतः अपनी राशि मनीऑर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरूआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जायेगी।

संत तुलसीदासजी

[गोस्वामी तुलसीदास जयंती : १४ अगस्त २००२]

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

'श्रीरामचरितमानस' के रचयिता संत तुलसीदासजी महाराज को कौन नहीं जानता है ? वे बड़े उच्च कोटि के संत थे। उनके जीवन में कई अलौकिक घटनाएँ घटी हैं जिनमें से कुछ का वर्णन यहाँ किया जा रहा है :

एक बार तुलसीदासजी वृंदावन गये। भक्त लोग संत तुलसीदासजी को भगवान बाँके बिहारी के मंदिर में ले गये। मंदिर में उन्होंने देखा कि यहाँ मोरमुकुटधारी, श्री बाँकेबिहारी खड़े हैं। तुलसीदासजी को देखकर लोगों के मन में विचार आया कि ये तो श्रीरामजी के भक्त हैं फिर श्रीकृष्णजी के मंदिर में कैसे आये ?

तुलसीदासजी लोगों के मन के भावों को ताड़ गये। भेद लोगों के मन में ही होते हैं। संत महापुरुष तो सर्वत्र अभेद का दर्शन करते हैं। उन्होंने सोचा कि लोग भी यह जान लें कि दोनों (श्रीराम-श्रीकृष्ण) में कोई भेद नहीं है। अतः तुलसीदासजी ने भगवान से प्रार्थना करते हुए कहा :

''मैं आपको प्रणाम तभी करूँगा जब आप अपनी बंसी छोड़कर हाथ में धनुष-बाण पकड़ोगे। राधा के बदले सीताजी लाओगे। (अर्थात् जब आप कृष्णरूप छोड़कर रामरूप में आओगे तब मैं प्रणाम करूँगा।)''

कहाँ कहूँ छबि आपकी भले बने हो नाथ।
तुलसी मस्तक तब नमे धनुष-बाण लो हाथ॥

तुलसीदासजी की दृढ़ इच्छाशक्ति से देखते-ही-देखते बाँकेबिहारी अदृश्य हो गये और श्रीरामजी प्रकट हो गये, राधाजी अदृश्य हो गयीं और सीताजी प्रकट हो गयीं।

कित मुरली कित चंद्रिका कित गोपिन के साथ।
अपने जन के कारणे श्रीकृष्ण भये रघुनाथ॥
अवधधाम धामाधिपति अवध पति श्रीराम।
सकलसिद्धि पति जानकी दासन पति हनुमान॥
कर में धनुष चढ़ाइयो चकित भये सब लोग।
मगन भये तुलसीदासजी देख रामजी को रूप॥

यह देखकर लोग आश्चर्यचकित हो गये! कैसी होती है महापुरुषों की लीला!

*

एक बार संत तुलसीदासजी अँधेरी रात में किसी जंगल से गुजर रहे थे। उस इलाके में चोरी बहुत होती थी।

तुलसीदासजी को अकेले देखकर चोरों के सरदार ने पूछा :

''तू कौन है ? इधर क्यों आया है ?''

सारे चोर मिलकर तुलसीदासजी को डराने-धमकाने लगे। लेकिन वे डरनेवाले थोड़े ही थे। तुलसीदासजी ने कहा :

''जो तुम हो हम वही हैं, भैया !''

उनको निडर देखकर चोरों ने भी समझा कि अगर यह साधारण आदमी होता तो भाग जाता। लगता है, यह भी हमारे जैसा ही है। नया लगता है बेचारा !

चोरों ने उन्हें अपना साथी बना लिया।

तुलसीदासजी उनके साथ चल पड़े। वे लोग चोरी करने के लिए किसीके घर में घुसने लगे तब तुलसीदासजी से बोले : ''ऐ नये चोर ! देख, हम लोग भीतर घुसते हैं। अगर कोई आये तो तू जरा आवाज मार देना। यही तेरी जिम्मेदारी है। नया-नया है, सीख जायेगा तो दूसरा काम दे देंगे। अभी तो यह हलका-फुलका काम कर। समझा ?''

तुलसीदासजी ने भी स्वीकृति में सिर हिलाया।

चोर ज्यों ही चोरी करने के लिए घर में घुसे, त्यों ही तुलसीदासजी ने अपने झोले में से शंख निकालकर फूँक दिया। सब चोर भागकर बाहर आ गये। बोले : ''क्या है ? क्या हुआ ?''

तुलसीदासजी : ''आपने ही तो कहा था कि कोई देखे तो आवाज मार देना। आवाज करता तो कोई मेरा गला दबा देता। इसलिए शंख बजा दिया।''

चोरों को हुआ कि यह बड़ा अजीब आदमी है। कोई दिखता तो है नहीं, फिर भी कहता है कि कोई देख रहा है !

''कौन देखता है ? यहाँ तो कोई नहीं दिख रहा है ?''

''जो सर्वव्यापक हैं, सर्वत्र हैं, जो मेरे हृदय में विराजमान हैं, वही आप लोगों के हृदय में भी विराजमान हैं, मुझे लगा कि जब सब जगह श्रीरामजी हैं तो वे आप लोगों को भी देख रहे हैं, वे आप लोगों को सजा देंगे। कहीं आप लोगों को सजा न मिल जाय इसलिए मैंने शंख बजा दिया।''

''तू चोर है कि कोई पागल है ?''

ऐसा कहकर चोरों ने तुलसीदासजी को एकटक निहारा। संतों की ओर एकटक देखने से संतों की निगाहों से, संतों के शरीर से जो दिव्य स्पंदन निकलते हैं वे तो असर करते ही हैं। चोर देखते रहे कि यह कैसा अजीब आदमी है !

देखते-देखते उनके भाव बदल गये और उन्हें लगा कि यह तो कोई साधुबाबा है। फिर उन्होंने श्रद्धाभाव से तुलसीदासजी को प्रणाम किया और उपदेश के लिए प्रार्थना की।

तुलसीदासजी के वचन सुनकर चोरों का मन पलट गया और वे सदा के लिए चोरी का धंधा छोड़कर प्रभु के भक्त बन गये। संतों की युक्तियाँ बड़ी निराली होती हैं ! कब, किस पर, किस रूप में उनके द्वारा दया-कृपा बरसे कहना मुश्किल है !

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ११८वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया अगस्त २००२ के अंत तक अपना नया पता भेज दें।

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

ब्रह्माजी का मोहभंग

[श्रीकृष्ण जन्माष्टमी : ३१ अगस्त २००२]

श्रीकृष्ण का प्रेमावतार अपने प्रेमीभक्तों को यही सीख देता है कि :

मुस्कराकर गम का जहर जिनको पीना आ गया।
ये हकीकत है कि जहाँ में उनको जीना आ गया॥

बाहर की परिस्थितियाँ जड़ हैं। बाहर कितना भी घाटा पड़ जाय पर अपने हृदय को कोसो मत, अपने मन को मलिन मत होने दो।

श्रीकृष्ण जन्मे तो जेल में और जन्मते ही पराये घर ले जाये गये। वहाँ वे गायें चराते, ग्वाल-गोपों के साथ मिलकर भोजन करते...

ब्रह्माजी जैसे सृष्टिकर्त्ता को भी हैरानी हो गयी कि साक्षात् परात्पर ब्रह्म, सर्वेश्वर, परमेश्वर, देवेश्वर भगवान गौएँ चरानेवाले श्रीकृष्ण का रूप लेकर आये! ग्वालबालों के साथ भोजन कर रहे हैं हमारे उपास्यदेव! हमारे पूजनीय! ब्रह्माजी भगवान की माया में थोड़े लड़खड़ा गये...

श्रीकृष्ण ग्वालबालों के साथ भोजन कर रहे थे, तब बछड़े चरते-चरते बड़ी दूर निकल गये। जब ग्वालबालों का ध्यान उस ओर गया, तब वे भयभीत हो गये। उस समय भगवान श्रीकृष्ण ने कहा : ''मेरे प्यारे मित्रो! तुम लोग भोजन करना बंद मत करो। मैं अभी बछड़ों को लिये आता हूँ।'' ग्वालबालों से इस प्रकार कहकर भगवान श्रीकृष्ण हाथ में दही-भात का कौर लिये ही पहाड़ों, गुफाओं, कुंजों और अन्यान्य भयंकर स्थानों में बछड़ों को ढूँढ़ने चल दिये। ब्रह्माजी पहले से ही आकाश में उपस्थित थे। उन्होंने पहले तो बछड़ों को और भगवान श्रीकृष्ण के चले जाने पर ग्वालबालों को भी अन्यत्र ले जाकर रख दिया और स्वयं अन्तर्धान हो गये।

भगवान श्रीकृष्ण बछड़े नहीं मिलने पर यमुनाजी के तट पर लौट आये। उन्होंने देखा कि यहाँ ग्वालबाल भी नहीं हैं। श्रीकृष्ण ने वन में घूम-घूमकर चारों ओर उन्हें ढूँढ़ा। जब ग्वालबाल और बछड़े उन्हें कहीं न मिले, तब उन्होंने ध्यान करके पता लगा लिया कि यह सारी करतूत ब्रह्माजी की है। ब्रह्माजी ने अपनी योगशक्ति से इन सबको चुरा लिया है।

श्रीकृष्ण ने धारणा की और अपनी योगशक्ति से जितने ग्वालबाल तथा बछड़े थे, उतने, वैसे-के-वैसे पुनः बना दिये!

ब्रह्माजी कुछ देर के बाद पुनः आये तब तक पृथ्वी पर एक वर्ष बीत चुका था। वैसे-के-वैसे ग्वालबाल तथा बछड़े देखकर ब्रह्माजी चकित रह गये। तब प्रभु की माया को जानकर ब्रह्माजी ने श्रीकृष्ण की स्तुति की :

'हे प्रभु! मुझे क्षमा करना। आपकी इस योगमाया और योग-सामर्थ्य को आप ही जानो।'

ब्रह्माजी ने भगवान की जो स्तुति की है वह 'श्रीमद्भागवत' के दसवें स्कंध के १४वें अध्याय में दी गयी है।

ब्रह्माजी ने असली गोप-बालकों और बछड़ों को लौटा दिया तब श्रीकृष्ण ने अपनी माया समेट ली।

परात्पर परब्रह्म श्रीकृष्ण की माया को समझने में जब ब्रह्माजी भी धोखा खा गये तो सामान्यजनों की तो बात ही क्या है? भगवान की माया से वे ही पार हो सकते हैं जो केवल उनको ही भजते हैं। इसीलिए गीता के सातवें अध्याय के १४वें श्लोक में स्वयं भगवान ने कहा है :

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते॥

'यह अलौकिक अर्थात् अति अद्भुत त्रिगुणमयी मेरी माया बड़ी दुस्तर है। परंतु जो पुरुष केवल मुझको ही निरंतर भजते हैं, वे इस माया का उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् संसार से तर जाते हैं।'

*

नागपंचमी

[नागपंचमी : २८ अगस्त २००२]

'नागपंचमी' अर्थात् नागदेवता के पूजन का दिवस... वैसे तो कुछ ऐसी भी जातियाँ हैं जो वर्षभर नागदेवता की पूजा करती हैं, गुजरात में वह जाति 'रबारी-देसाई' कही जाती है। किंतु नागपंचमी के दिन तो सभी लोग नागदेवता की पूजा करते हैं।

विचारकों का कहना है कि पूर्वकाल में जब मनुष्य ने खेती करना आरंभ किया था, तब खेत में छिड़की जानेवाली फसलरक्षक दवाओं तथा दवा छिड़कने के साधनों का विकास नहीं हुआ था। उस समय खेती को नष्ट करनेवाले चूहों तथा अन्य छोटे जीव-जन्तुओं को नागदेवता स्वाहा कर जाते थे और खेती की रक्षा हो जाती थी। इसके कारण मानव-समाज अपने को उनका ऋणी मानता था।

इसके अलावा खेत में हल चलाते वक्त कभी-कभार नाग अथवा नागिन हल के नीचे आ जायें तो वे बदला लिये बिना नहीं रहते, ऐसी परंपरागत कथा-वार्ता सभी सुनते आये हैं। इसलिए साँप के वैर से बचने के लिए वर्ष में एक दिन उनकी पूजा करने का विधान किया गया। वही दिन नागपंचमी कहलाता है।

नागपंचमी के सम्बंध में कई कथाएँ प्रचलित हैं :

किसी गाँव का एक किसान जब अपना खेत जोत रहा था तब उसके हल में सर्पिणी की पूँछ आ गयी। सर्पिणी तो भाग गयी लेकिन उसके तीन बच्चे मर गये। उस सर्पिणी ने बदला लेने के लिए रात्रि में किसान के तीन बच्चों को डँस लिया।

यह सुनकर पड़ोस के गाँव में ब्याही हुई किसान की बड़ी कन्या रोती-बिलखती पिता के घर आयी। उस रात्रि में भी सर्पिणी किसान के बच्चों को डँसने के लिए आयी किंतु अपने भाई-बहनों के शोक में व्याकुल किसान की बड़ी पुत्री को नींद नहीं आ रही थी, अतः उसने सर्पिणी को देख लिया। पहले तो वह घबरा गयी लेकिन बाद में सर्पिणी के लिए दूध की कटोरी लेकर आयी और पिता के अपराध के लिए क्षमा-प्रार्थना करने लगी। लड़की द्वारा इस प्रकार स्वागत करने पर सर्पिणी का क्रोध प्रेम में बदल गया और उसने अपने द्वारा डँसे गये बालकों का जहर वापस खींच लिया।

तबसे नागपंचमी के दिन नाग के पूजन की परंपरा चल पड़ी - ऐसा कहा जाता है।

सिंधी जगत में भी एक कथा प्रचलित है :

किसी निर्धन महिला की एक कन्या थी और उस कन्या को धनप्राप्ति की खूब लालसा थी। एक दिन उसे स्वप्न में सर्पदेवता के दर्शन हुए तथा उन्होंने कहा :

''फलानी जगह पर धन गड़ा हुआ है, तू वहाँ आकर ले जा। मुझे कोई बहन नहीं है और तुझे कोई भाई नहीं है तो आज से तू मेरी बहन और मैं तेरा भाई !''

सर्पदेवता द्वारा बतायी जगह पर उसे बहुत धन मिला और वह खूब धनवान हो गयी। फिर तो वह प्रतिदिन अपने सर्प भाई के पीने के लिए दूध रखती।

सर्पदेवता आकर दूध में पहले अपनी पूँछ डालते और बाद में दूध पीते। एक दिन जल्दबाजी में बहन ने दूध ठंडा किये बिना ही रख दिया। सर्प ने आकर ज्यों ही अपनी पूँछ डाली तो गर्म दूध से उसकी पूँछ जल गयी। सर्प को विचार आया, 'मैंने बहन को इतना धन दिया किंतु वह दूध का कटोरा भी ठीक से नहीं देती है। अब इसे सीख देनी पड़ेगी।'

बहन श्रावण महीने में अपने कुटुंबियों के साथ कोई खेल खेल रही थी। सर्प को हुआ कि 'इसके पति को यमपुरी पहुँचा दूँ तो इसे पता चले कि लापरवाही का बदला कैसा होता है ?'

सर्पदेवता उसके पति के जूतों के करीब छिप

गये। इतने में तो खेल-खेल में कुछ भूल हो गयी। किसी बहन ने कहा :

''यहाँ चार आने नहीं रखे थे।''

सर्प की बहन ने कहा : ''सत्य कहती हूँ कि यहीं रखे थे। मैं अपने प्यारे भाई सर्पदेवता की सौगंध खाकर कहती हूँ।''

यह सुनकर सर्प को हुआ कि इसे मेरे लिए इतना प्रेम है! जिस तरह लोग भगवान अथवा देवता की सौगंध खाते हैं, वैसे ही यह मेरी सौगंध खाती है! अतः वे प्रकट होकर बोले :

''तूने तो भूल की थी और मैं भी बड़ी भूल करने जा रहा था। परंतु मेरे प्रति तुम्हारा जो प्रेम है उसे देखते हुए मैं तुझे वरदान देता हूँ कि आज के दिन जो भी बहन मुझे याद करेगी उसके पति अकाल मृत्यु और सर्पदंश के शिकार नहीं होंगे।''

बहनें आज के दिन व्रत तथा नागदेवता का पूजन करती हैं।

वेद की ऋचा में भी सर्प की स्तुति आती है। भगवान शिवजी के आभूषण तो सर्प ही हैं और गणपतिजी भी सर्प को धारण करते हैं। लक्ष्मणजी और बलरामजी को शेषावतार माना जाता है। नागों में वासुकि नाग और शेषनाग अपने आत्मदेव को जानते हैं, अतः उनकी पूजा होती है।

पुराणों में आता है :

राजा परीक्षित की मृत्यु तक्षक नाग के डँसने से हुई थी। परीक्षित के पुत्र जन्मेजय को हुआ कि 'पिता को मारनेवाले शत्रु से यदि बदला न लिया तो मैं पुत्र किस बात का ?' उसने ब्राह्मणों से सर्प-यज्ञ आरंभ करवाया। मंत्र का उच्चारण करके यज्ञ में आहुतियाँ दी जाने लगीं, सर्प खिंच-खिंचकर हवनकुंड में गिरने लगे।

तक्षक नाग को मंत्रशक्ति के प्रभाव का पता चला तब उसने इंद्र की शरण ली। इंद्र ने तक्षक की रक्षा के लिए ऋषियों से प्रार्थना की, तब बृहस्पतिजी के समझाने से जन्मेजय ने सर्प-यज्ञ बंद करवाया।

इस प्रकार अलग-अलग देशों, राज्यों, प्रांतों, जातियों में नागपंचमी के सम्बंध में अलग-अलग कथाएँ प्रचलित हैं।

जो मनुष्य को अपने दंश से यमपुरी पहुँचा देने में समर्थ है, ऐसे सर्प के प्रति भी मानव के चित्त में द्वेष न रहे, मनुष्य उससे डरे नहीं, वरन् भय तथा द्वेष जिस प्रभु की सत्ता से दिखते हैं वही प्रभु सर्प में भी हैं - इस भावना से नागपंचमी के दिन नाग की पूजा करें। नागपंचमी को मनाने का ऐसा आशय भी हो सकता है और तत्त्व की दृष्टि से देखा जाय तो यह सही भी है। भगवान श्रीकृष्ण ने 'श्रीमद्भगवद्गीता' में कहा है :

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यंत्रारूढानि मायया॥

'शरीररूपी यंत्र में आरूढ़ हुए सम्पूर्ण प्राणियों को अंतर्यामी परमेश्वर अपनी माया से उनके कर्मों के अनुसार भ्रमण कराता हुआ सब प्राणियों के हृदय में स्थित है।' **(गीता : १८.६१)**

जो हमें डँसकर मार सकता है ऐसे सर्प में भी भगवान को देखने की प्रेरणा इस उत्सव से मिलती है। कैसी सुंदर व्यवस्था है हमारे सनातन धर्म में, जिससे मौत जीवन में, द्वेष प्रेम में और मनमुखता मुक्तिदायी विचारों में बदल सकती है।

*

दिनांक : १० सितंबर २००२ को गणेशचतुर्थी है। इस दिन चंद्रदर्शन नहीं करना चाहिए। चंद्रास्त का समय है : २१.२८ अर्थात् रात्रि : ९ बजकर २८ मिनट।

यदि भूल से इस दिन चंद्रमा दिख जाय तो 'श्रीमद्भागवत' के दसवें स्कंध के ५६-५७वें अध्याय का, जिसमें श्रीकृष्ण पर स्यमंतकमणि की चोरी के कलंकवाली कथा है, उसका आदरपूर्वक श्रवण अथवा पठन करना चाहिए। इससे तथा तृतीया ९ सितंबर २००२ और पंचमी ११ सितंबर २००२ को चंद्रदर्शन से कलंक का प्रभाव दूर होता है। जहाँ तक हो सके इस दिन चंद्रमा न दिखे इसकी सावधानी रखें।

भक्त रसखान

✲ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✲

सैयद इब्राहीम नामक एक मुसलमान व्यक्ति ने धंधा आदि किया। उसमें उसका मन नहीं लगा। आखिर वह एक सुंदरी के चक्कर में आ गया। कभी तो सुंदरी उससे मुहब्बत करती तो कभी उसका अपमान कर देती।

एक बार सुंदरी द्वारा अपमानित किये जाने पर इब्राहीम के दिल को बड़ी चोट लगी। भगवान कब, किस ढंग से, किसको अपने रंग में रँग दें कहना मुश्किल है ! उसका कोई पुण्योदय हुआ...

वहाँसे अपमानित होकर इब्राहीम चला तो कहीं पर उसे फारसी भाषा में 'श्रीमद्भागवत' पढ़ने का अवसर मिल गया। भगवान श्रीकृष्ण की लीलाएँ पढ़ते-पढ़ते उसने विचार किया कि 'मोहब्बत करें तो श्रीकृष्ण से ही करें। किसी और से क्यों करें ?'

इब्राहीम गोकुल-वृंदावन गया, गोवर्धन पर्वत की प्रदक्षिणा की, संत-महात्माओं के दर्शन किये। फिर वृंदावन में श्री वल्लभाचार्य के पुत्र अरुणी के उत्तराधिकारी गोस्वामी विठ्ठलनाथ की शरण गया और उनसे प्रार्थना की कि 'महाराज ! मैंने पैसे कमाकर देख लिये, वाहवाही कराकर देख लिया किंतु कुछ न मिला... जिस शरीर को भोग और यश मिला वह तो अंत में दफना दिया जायेगा। अब आप कृपा करके मुझे कन्हैया की भक्ति का दान दीजिये।'

गोस्वामीजी का हृदय इब्राहीम की प्रार्थना से प्रसन्न हो उठा और उन्होंने उसे मंत्र दे दिया। सैयद इब्राहीम श्रीकृष्ण की पूजा करता, उनकी छवि को निहारते-निहारते प्रेमपूर्वक गुरुमंत्र का जप करता।

धीरे-धीरे वे कृष्णप्रेम-रस में रँगते गये, उनको अंतरात्मा का रस आने लगा और उनका नाम पड़ गया - 'रसखान'।

उन्होंने श्रीकृष्ण-प्रेम के अनेकों पद और कविताएँ लिखीं जो भारतीय साहित्य में आज भी देखने को मिलती हैं। 'गुरुग्रंथ साहिब' में बाबा फरीद के वचन दर्ज किये गये हैं और हिन्दी साहित्य में सैयद इब्राहीम-रसखान, रैयाना तैयब, जलालुद्दीन रोमी आदि के वचन मिलते हैं। कितनी विशाल हृदय है भारतीय संस्कृति !

रसखान लिखते हैं :

तेरी माननी तो हियो, हेरी मोहिनी मान।
प्रेमदेव की छबि लखी, भये मिया रसखान॥

एक हाड़-मांस की पुतली में सुख खोजने की बेवकूफी मिटी, वहाँसे मुख मोड़ा और लाखों सुंदरियों-सुंदरों से भी प्यारे, यहाँ तक कि कामदेव से भी प्यारे कृष्ण को देखकर मियाँ से रसखान हो गया। हे रसीले कृष्ण ! मैं तेरा दीवाना हो गया...

रसखान लिखते हैं :

सेस गनेस महेस दिनेस सुरेसहु जाहि निरंतर गावैं।
जाहि अनादि अनंत अखंड अछेद अभेद सुबेद बतावैं॥
नारद से सुक व्यास रहैं पचि हारे तऊ पुनि पार न पावैं।
ताहि अहीर की छोहरिया छछिया भरी छाछ पै नाच नचावैं॥

भगवान शेष, गणेश, महेश, सूर्य, इन्द्र आदि जिस सच्चिदानंद परमात्मा कृष्ण का गुणगान करते हैं, जो अनादि, अनंत, अखंड, अछेद्य और अभेद है, शुकदेवजी जिनका स्मरण करके समाधिस्थ हो जाते हैं, व्यासजी जिनकी व्याख्या करते अघाते नहीं हैं, नारदजी जिनके नाम-रस में मग्न रहते हैं, वे ही ग्वालिनों के प्रेम से छछियनभरी छाछ के लिए नाचने को तैयार हो जाते हैं !

कैसा है उस प्रेमास्पद श्रीकृष्ण की प्रेमाभक्ति का प्रभाव कि एक मुसलमान सैयद, कहाँ तो शरीर के सुख-भोग में फँसा था और पढ़ी प्यारे श्रीकृष्ण की लीलाएँ तो उनके प्रेमरस में दीवाना हो इब्राहीम से रसखान हो गया !

इतिहास का सबसे बड़ा संकट हिन्दुओं पर आनेवाला है

आपका जीवन, धन और देश खतरे में...

महान आश्चर्य की बात है कि अमेरिका तथा यूरोप के ८० धर्मनिरपेक्ष (सेक्यूलर) कहलानेवाले देशों में ईसाई धर्म और ईसाई समाज की उन्नति केलिए दिन-रात कार्य किये जाते हैं। सभी यहूदी, मुसलिम तथा बौद्ध देशों में भी उनके धर्म व समाज की उन्नति के लिए हरेक उपाय किये जाते हैं। लेकिन दुर्भाग्य से भारत में हिन्दू धर्म, संस्कृति, हिन्दू समाज और उसकी भावनाओं को निरंतर ठोकर मारना बुद्धिजीवियों तथा अल्पसंख्यकों का कानूनी अधिकार तो माना ही जाता है, साथ ही हिन्दुओं के जान की भी कोई कीमत नहीं। ऐसा अँधेर दुनिया में कहीं नहीं है, इससे सर्वश्रेष्ठ हिन्दू समाज का पतन हो रहा है।

भारत प्राकृतिक संपत्ति तथा बुद्धिमानी में सर्वश्रेष्ठ होते हुए भी विदेशी विचार, समाजवाद और नकली धर्मनिरपेक्षता के कारण आज दुनिया का सबसे अधिक गरीब और हिंसात्मक देश बनता जा रहा है।

वोट के लालची सेक्यूलरवादी, अवसरवादी और जयचंदवादी नेता हिन्दू समाज (सनातनधर्मी, जैन, बौद्ध, सिख) को सैकड़ों जातियों में बाँटकर तथा अल्पसंख्यकों व दलितों को भड़काकर आपसी घृणा उत्पन्न कर रहे हैं। संप्रदायवाद, प्रांतवाद, जातिवाद, भाषावाद व अलगाववाद के जरिये देश को तोड़ने व उसे अल्पसंख्यकों का देश बनाने का प्रयत्न हो रहा है। विदेशी शक्तियाँ इसमें भरपूर मदद कर रही हैं। देश के संप्रदायों को आपस में जोड़नेवाले राष्ट्रवाद को ये धूर्त नेतागण संकुचित व सांप्रदायिक कहते हैं।

हिन्दुओं के ही वोट पर चुने गये धर्मनिरपेक्षतावादी और कम्युनिस्ट नेता तथा उनका बिकाऊ प्रेस हिन्दुओं के मानवाधिकारों व लोकतांत्रिक अधिकारों को पैरों तले कुचलकर हिन्दुओं के साथ विश्वासघात कर रहे हैं और हिन्दुओं के साथ जिन्होंने जितना बड़ा विश्वासघात किया उन्हें उतना बड़ा पद मिला। हिन्दुओं को झूठा इतिहास पढ़ाकर उन्हें धोखा दिया जा रहा है। हिन्दुओं को कहा जाता है कि धर्मनिरपेक्षता के लिए अपनी महान संस्कृति, वेद, गीता, मंदिर, देवताओं, तीर्थों, महापुरुषों व अपने आत्मसम्मान को भूल जायें।

परम वीर व समृद्धशाली हिन्दू समाज अपनी अत्यंत सहनशीलता, 'सर्वधर्मसमभाव, **क्षमा वीरस्य भूषणम्** व विश्वबंधुत्व' के कारण कभी खतरा नहीं देखता और खतरे की बात नहीं पढ़ता। हिन्दुओं में देशबंधुत्व व धर्मबंधुत्व नहीं है इसलिए उनमें एकता व संगठन नहीं है। परिणामस्वरूप हिन्दू हजार वर्ष से सत्ता से कटा हुआ है। उस पर हजार वर्ष से भयंकर विदेशी आक्रमण हो रहे हैं। उसे लूटा जाता है, कत्ल किया जाता है, उसका धर्म-परिवर्तन किया जाता है, उसके हजारों मंदिर तोड़े जाते हैं और उनकी नारियों पर अत्याचार होते हैं। इतनी लूट और इतना अमानवीय अत्याचार दुनिया की किसी कौम पर नहीं हुआ। इस तरह ऐतिहासिक दृष्टि से हिन्दू दुनिया की सबसे अधिक सतायी हुई जाति है। इतना होने के बावजूद भी हिन्दू सारे विश्व का कल्याण विचारता रहा है और सारा विश्व उसे निगल जाना चाहता है।

फिर भी भूतकाल में हिन्दू राजाओं ने अनेक मसजिद और गिरजाघर बनवाये। हिन्दू आज भी सच्चे दिल से 'हिन्दू, ईसाई व मुसलिम भाई भाई' गाते हैं और आजादी के बाद अल्पसंख्यकों को राष्ट्रपति, मुख्यमंत्री व राज्यपाल बना रहे हैं। हिन्दू जितनी अधिक सज्जनता, उदारता दिखलाते हैं उन्हें उतना ही अधिक कायर मानकर, उन पर

अन्याय और उनके साथ विश्वासघात किया जा रहा है। आजादी के बाद भी हिन्दू भारत में गुलामों की तरह जी रहा है।

भाग्यवादी, अवतारवादी हिन्दुओं ने इतिहास से कोई सबक नहीं सीखा। वे राजनीति से दूर भागते हैं, अपनी शुभचिंतक संस्थाओं को सांप्रदायिक कहते हैं, हमेशा शांति की भीख माँगते हैं तथा अन्याय के सामने कायरता से घुटने टेक देते हैं। हजार वर्ष की गुलामी के कारण उनमें सामंतशाही, दलित-दमन, नारी-दमन, कायरता, आत्महीनता, स्वार्थ व ईर्ष्या उत्पन्न हो गयी है। दुनिया के अधिकतर संप्रदायों के पास हजारों करोड़ के फंड हैं, पर अभागे हिन्दू समाज की रक्षा के लिए २५ करोड़ का भी फंड नहीं है !

※ इतिहास के अनुसार ईसाई मिशनरियों ने अफ्रीका तथा दक्षिण अमेरिका के पचीसों गरीब देशों को लोभ, झूठे चमत्कार, अंधविश्वास, षड्यंत्र, बल और अत्याचार द्वारा ईसाई बनाकर साम्राज्यवाद द्वारा उनका शोषण करके उन्हें खोखला कर दिया। दुनिया को धार्मिक अशांति, घृणा, अन्याय, आतंकवाद, उप-निवेशवाद, अलगाववाद, दो महायुद्ध, एटमबम, सेक्स का दुराचार और एडस् जैसी बीमारियाँ तथा परिवारों में नैतिक पतन, फूट, स्वार्थ और माता-पिता का अपमान आदि ईसाई देशों की ही देन है।

मिशनरियों ने भारत में हिन्दुओं को बलपूर्वक ईसाई बनाने के लिए सैकड़ों लोगों को जिन्दा जलाया। इन सब पापों को छिपाने के लिए वे अब सेवाकार्य कर रहे हैं जिसके द्वारा लाखों हिन्दुओं का धर्म-परिवर्तन हो रहा है। ईसाई मिशनरियाँ पूरे भारत को 'ईसाई लैंड' बनाकर पोप (ईसाईयों का सर्वोच्च धर्मगुरु) के चरणों में डाल देना चाहती हैं ताकि उसे धार्मिक गुलाम बनाकर उसका निरंतर आर्थिक शोषण किया जा सके।

※ 'टाइम्स' तथा 'इंडियन एक्सप्रेस' के अनुसार कश्मीर में पाकिस्तानी आतंकवादियों द्वारा हिन्दुओं पर भयंकर अत्याचार किये गये हैं। बेरहमी से उनके हाथ-पैर काट दिये गये, आँखें निकाली गयी, महिलाओं के साथ सामूहिक बलात्कार करके उनके स्तन काट लिये गये, पर उनकी सुरक्षा के लिए धर्मनिरपेक्ष सरकार (?) ने कोई सेना नहीं भेजी। सेना भेजी गयी मुलायम सिंह के शासन में अयोध्या (उ.प्र.) के अहिंसक, निहत्थे रामभक्तों पर गोली चलाने के लिए। हिन्दू सावधान न हुए तो जो कश्मीर में हुआ वो धीरे-धीरे सारे भारत में होगा।

※ आतंकवाद के विशेषज्ञ अमेरिका के श्री जोसेफ बोड़ान स्काई ने कहा है : 'पाकिस्तान की जासूसी संस्था आई. एस. आई का उद्देश्य हिन्दू समाज में जाति, भाषा और प्रांतों के नाम पर फैली आपसी फूट का लाभ उठाकर सारे भारत पर कब्जा करना है।' इस संस्था ने पूरे भारत में अपने अनेक अड्डे बना रखे हैं, जहाँ बम और राइफलें भरी जा रही हैं।

※ लगभग २५ पाकिस्तानी आतंकवादी गुट, आई.एस.आई जैसी जासूसी संस्थाएँ तथा यादव सेना, नागाफ्रंट और खालिस्तान फ्रंट जैसी ३० उग्रवादी संस्थाएँ, मुंबई जैसे बम-विस्फोट तथा गृहयुद्ध द्वारा भारत को बर्बाद करने की योजनाएँ बना रही हैं। (इंडिया फॉर सेल ऑबजरवर) ईसाईयों के ८० देश हैं, मुसलमानों के ५६ देश हैं पर हिन्दुओं का अब कोई देश नहीं बचा। भारत एक धर्मशाला हो गया है जहाँ गृहयुद्ध में करोड़ों निरपराधी कट जायेंगे।

※ सेक्यूलरवादी तथा कुछ कम्युनिस्ट नेताओं ने अपना 'वोट बैंक' बनाने के लिए बंग्लादेश से डेढ़ करोड़ मुसलिम घुसपैठियों को भारत में आने दिया, जो देश में दंगे, बेकारी व गरीबी फैला रहे हैं। दुबई के गुंडे धमकी देकर भारत के व्यापारियों से करोड़ों रुपये वसूल कर रहे हैं और उनकी हत्याएँ भी कर रहे हैं। लेकिन इन अपराधियों को सजा नहीं दी जाती क्योंकि इन्हींकी मदद से सेक्यूलरवादी नेता चुनाव जीतते हैं।

※ स्कूलों में कुरान और बाइबिल तो पढ़ाई जा सकती है, पर हिन्दुओं को उनके चरित्र का निर्माण करनेवाले अमृतस्वरूप ग्रंथ वेद, गीता और

रामायण नहीं पढ़ाये जा सकते । परिणामस्वरूप देश में भयंकर चरित्रहीनता व भ्रष्टाचार बढ़ रहा है। इससे देश में २० गुना महँगाई बढ़ी है तथा ४ लाख करोड़ का विदेशी कर्ज हो गया है। कॉलेजों में तेजी से ड्रग और दुराचार फैल रहे हैं। हजारों वर्ष प्राचीन अमूल्य महान जीवन पद्धति, हिन्दू संस्कृति नष्ट हो रही है तथा विश्व की सबसे पवित्र हिन्दू नारी का पतन हो रहा है।

❊ आज भारत को एक सहनशील, कोमल देश मानकर उस पर चारों ओर से आतंकवादी, बंग्लादेशी घुसपैठिये, दुबई के गुंडे, विदेशी धर्म, विदेशी संस्कृति, बहुराष्ट्रीय कंपनियाँ, देश के भ्रष्ट धर्मनिरपेक्ष कहलानेवाले नेता व बुद्धिजीवी तथा बिकाऊ प्रेस लगातार आक्रमण करके भारत की आजादी खतरे में डाल रहे हैं तथा देश को लूटकर गरीब बना रहे हैं। गौहत्या करने से देश का आर्थिक विनाश हो रहा है।

आज देश की गरीबी व बर्बादी का मुख्य कारण यह है कि भोली जनता झूठे नाटक और वायदे सुनकर तथा चावल-चीनी की भीख लेकर असत्यवादी, देश को लूटनेवाले, भ्रष्टाचारी, दुराचारी, गौहत्यारे, अपराधी, रामद्रोही, स्मगलर्स, बिकाऊ तथा घटिया, नकली समाजवादी व सेक्यूलरवादी लोगों को सम्मान व वोट दे रही है तो उसे कौन बचा सकता है ?

हिन्दू दलितों की मदद के लिए बनायी गयी योजना के हजारों करोड़ रुपये विश्वासघात द्वारा उनके हितचिंतक कहलानेवाले नेता लोग लूटकर हजम कर गये, जिससे दलित और गरीब होते गये। जरूरत इस बात की है कि धन दलितों तथा गरीबों की शिक्षा व स्वास्थ्य ‌ ‌र और बेकारी दूर करने के लिए खर्च किया जाय। चारित्र्यवान, ईमानदार नेता ही दलितों का भला कर सकते हैं।

भारत परम तेजस्वी व शक्तिशाली ऋषियों का देश है, स्मगलर्स, भ्रष्टाचारी, गौहत्यारों का नहीं । हिन्दू धर्म विश्व-कल्याण करनेवाला सर्वश्रेष्ठ मानव-धर्म है । हिन्दू धर्म के प्रभाव से कई हिन्दू विश्वप्रसिद्ध वैज्ञानिक, योद्धा, साहित्यकार, राजनेता और व्यापारी हुए हैं, जिन्होंने मिलकर इस देश की उन्नति की है और भविष्य में भी करेंगे।

गाँधीजी के अनुसार भारत राम और युधिष्ठिर का देश है और हिन्दू धर्म सब धर्मों की माता है। फिर हिन्दुओं का धर्म-परिवर्तन क्यों ?

हिन्दुओं का अस्तित्व खतरे में

हिन्दू कहते हैं, 'हम दो हमारे दो' पर मुसलमान कहते हैं, 'हम ५ हमारे २५।' इस तरह २०-२५ वर्षों में देश के कई क्षेत्रों में हिन्दू अल्पसंख्यक होकर गुलाम हो जायेंगे, तब उनके हाथ में जमीन, धन, मकान, फैक्टरी, मंदिर, अस्पताल, स्कूल कुछ भी नहीं रहेगा। फिर भी भोले और अभागे हिन्दू सो रहे हैं। यदि १५ वर्ष में हिन्दू शक्तिशाली नहीं हुए तो फिर उनका बचना संभव नहीं।

क्या आप जानते हैं हिन्दुओं के अल्पसंख्यक होने का नतीजा ?

बंग्लादेश में हिन्दू अल्पसंख्यक हैं। मुसलिम बहुल बंग्लादेश में बेगम खालिदा जिया के प्रधानमंत्री बनने के बाद बंग्लादेश नेशनल पार्टी (बी.एन.पी.), जमात इस्लामी पार्टी तथा भारत विरोधी कट्टरपंथी मुसलिमों द्वारा हिन्दुओं पर भारी मात्रा में अत्याचार किये जा रहे हैं।

❊ परिणाम ❊

❊ १५,००० परिवार (१ लाख बंधु और बहनें) बेघर हुए।

❊ २०० माता-बहनों पर बलात्कार हुए, माता के सामने पुत्री पर बलात्कार।

❊ हिन्दुओं को मारना, घरों को लूटना, जलाना।

❊ महिलाओं को नग्न करके घुमाना, सामूहिक बलात्कार।

❊ खुलेआम गौवंश की हत्या करना, हिन्दुओं को जबरदस्ती गौमांस खिलाना।

❊ दुर्गापूजा पर प्रतिबंध लगाना।

❊ दहशत के कारण हिन्दुओं का जीना

मुश्किल हो गया है । प्राणभय से हिन्दू अपना घर, संपत्ति, परिवार छोड़कर भारत में शरण ले रहे हैं । स्थानीय पुलिस, प्रशासन हिन्दुओं की शिकायत दर्ज नहीं कर रही है । बहुसंख्यक मुसलिम देश में अल्पसंख्यक हिन्दू सुरक्षित नहीं रह सकता ।

* भारत के सुरक्षा बलों के १६ जवानों की निर्मम हत्या की गयी । सरकार केवल जुबानी विरोध करती रही ।

समस्त हिन्दू समाज को संगठित होकर इस अत्याचार, अनाचार का विरोध करना चाहिए । देशवासियों जागो !

जब ८० करोड़ हिन्दुओं का उद्धार होगा तभी अल्पसंख्यकों का उद्धार होगा । 'हिन्दू वोट बैंक' से ही भारत बचेगा, शक्तिशाली और जगद्‌गुरु होगा तथा हिन्दुओं के दृढ़ संकल्प से ही देश का निर्माण होगा । हिन्दू चाहते हैं कि देश में सब संप्रदाय के लोग धनवान और सुखी हों । भारत की उन्नति हिन्दुओं पर निर्भर है (गाँधीजी) पर आज हिन्दू समाज का ही अस्तित्व खतरे में है ।

एकता के अभाव में अभागे हिन्दू हजार वर्ष गुलाम होकर लुटते-पिटते रहे । लेकिन 'हिन्दू वोट बैंक' बनते ही हिन्दू, मुसलिम, ईसाइयों की एकता हो जायेगी । पाकिस्तान, अमेरिका और चीन दोस्ती का हाथ बढ़ायेंगे । देश में चरित्रवान लोगों का राज्य होगा जिससे भ्रष्टाचार घटेगा, व्यापार बढ़ेगा और गरीबी दूर होगी ।

देश के दुश्मन चौगुनी शक्ति से बढ़ रहे हैं, अतः समस्त हिन्दू समाज विशेषकर बड़े व्यापारी, बड़े हिन्दू ट्रस्ट और बड़े मंदिरों को भी चाहिए कि वे हिन्दुओं की सच्ची शुभचिन्तक संस्थाओं के कार्यकर्त्ताओं को तन-मन-धन से भरपूर मदद करें । मुसलिम और ईसाई संस्थाओं से हमें उनकी एकता व गरीबों की सेवा सीखनी होगी ।

इतिहास में हिन्दू परम वीर रहे हैं, अतः उन्हें अपनी अत्यंत सहनशीलता, कायरता व नपुंसकता छोड़कर अपनी आजादी व लोकतांत्रिक अधिकारों की रक्षा के लिए शीघ्र बड़ा वोट बैंक, बड़ा प्रचार, बड़ा धन-संग्रह, बड़ा आंदोलन करना होगा । ये देश की आजादी का दूसरा आंदोलन है । अपना 'वोट बैंक' बनाये बिना हिन्दुओं का बचना असंभव है । देश के लाखों साधु लोग, विद्यार्थी, गाँव के लोग, महिलाएँ तथा पुलिस व सेना के जवान वीर बनकर देश की रक्षा करें । सारा देश उनकी ओर देख रहा है । ब्राह्मणों को सब कार्य छोड़कर अब दलितों के साथ मिलकर देश की रक्षा के कार्य में लगना चाहिए । ऋषियों ने इसी कार्य के लिए उनका निर्माण किया है । इसीलिए इतिहास में सच्चे ब्राह्मण हमेशा निर्लोभी, चरित्रवान, बुद्धिमान और राष्ट्रभक्त रहे हैं ।

हिन्दू आपस में जाति, पंथ, संप्रदाय, भाषा, प्रांत आदि के सभी भेदभाव से ऊपर उठकर एक हों । उन स्वार्थी हिन्दुओं को धिक्कार है जो अपने समाज व देश की रक्षा के लिए कुछ नहीं करते ।

- आनंद शंकर पंड्या

*

भजन का अर्थ है समता, त्याग । जो लोग सुखी हैं उनको देखकर तुम्हें विषमता होती है । तुम्हें होता है कि 'मैं भजन करता हूँ और मुझे ऐसा सुख नहीं मिलता ।' यह भजन का फल नहीं है । यह तो स्वार्थ है । एक तो ईर्ष्या का दोष तुममें आता है और दूसरा, बाहर के नश्वर सुख की इच्छा आयी । यह तो तुम किराये पर भजन करते हो । सच्चा भजन नहीं करते । यदि तुम सच्चा भजन करो तो तुम्हारे चित्त में फरियाद न हो और तुम्हारी छाया जिस पर पड़े वे लोग भी सुखी हो जायें । तो तुम्हारी अपनी तो बात ही क्या है ? तुम्हारी दृष्टि जिस पर पड़े वे लोग सुखी होने लगें । बाहर के नश्वर पदार्थ न हों तो भी उनके हृदय में सुख की तरंगें उछलने लगें । तुम निष्काम भजन करो, निष्काम ध्यान करो, निष्काम तत्त्व का अन्वेषण करो तो तुम्हारी इस नश्वर आँख में भी ऐसी शक्ति आ जाय कि सामनेवाले के शाश्वत के द्वार खुलने लगेंगे । हे जीव ! तुझमें इतनी ताकत है ।

- आश्रम की पुस्तक 'शीघ्र ईश्वरप्राप्ति' से

केशवराव हेडगेवार

✻ संत श्री आसारामजी बापू के सत्संग-प्रवचन से ✻

विद्यालय में बच्चों में मिठाई बाँटी जा रही थी। जब एक ११ वर्ष के बालक केशव को मिठाई का टुकड़ा दिया गया तो उसने पूछा : ''मिठाई किस बात की है ?''

कैसा बुद्धिमान रहा होगा वह बालक ! जीभ का लंपट नहीं वरन् विवेक-विचार का धनी रहा होगा।

बालक को बताया गया : 'आज महारानी विक्टोरिया का 'बर्थ डे' (जन्मदिन) है इसलिए खुशी मनायी जा रही है।'

बालक ने तुरन्त मिठाई के टुकड़े को नाली में फेंक दिया और कहा : ''रानी विक्टोरिया अंग्रेजों की रानी है और उन अंग्रेजों ने हमको गुलाम बनाया है। गुलाम बनानेवालों के जन्मदिन की खुशियाँ हम क्यों मनायें ? हम तो खुशियाँ तब मनायेंगे जब हम अपने देश भारत को आजाद करा लेंगे।''

वह बुद्धिमान बालक केशव जब नागपुर के 'नीलसिटी हाई स्कूल' में पढता था, तब उसने देखा कि अंग्रेज जोर-जुल्म करके हमें हमारी संस्कृति से, हमारे धर्म से, हमारी मातृभक्ति से दूर कर रहे हैं। यहाँ तक कि **'वन्दे मातरम्'** कहने पर भी प्रतिबंध लगा दिया है !

वह धैर्यवान और बुद्धिमान लड़का हर कक्षा के प्रमुख से मिला और उनके साथ गुप्त बैठक की। उसने कहा : ''हम अपनी मातृभूमि में रहते हैं और अंग्रेज सरकार द्वारा हमें ही **'वन्दे मातरम्'** कहने से रोका जाता है। अंग्रेज सरकार की ऐसी-तैसी...''

जो हिम्मतवान और बुद्धिमान लड़के थे उन्होंने केशव का साथ दिया और सभीने मिलकर तय किया कि क्या करना है। लेकिन 'यह बात गुप्त रखनी है और अपने नेता का नाम नहीं लेना है।' प्रत्येक कक्षा-प्रमुख ने यह बात तय कर ली।

ज्यों ही स्कूल का निरीक्षण करनेवाला बड़ा अधिकारी और कुछ लोग केशव की कक्षा में आये, त्यों ही उसके साथ कक्षा के सब बच्चे खड़े हो गये और बोल पड़े - **'वंदे मातरम् !'** शिक्षक तो भारतीय थे लेकिन अंग्रेजों की गुलामी से जकड़े हुए थे, वे चौंके ! निरीक्षक हड़बड़ाये : 'यह क्या बदतमीजी है ! यह **'वंदे मातरम्'** किसने सिखाया ? उसको खोजो, पकड़ो।'

दूसरी कक्षा में गये। वहाँ भी बच्चों ने खड़े होकर कहा : **'वंदे मातरम्।'**

अधिकारी : 'ये भी बिगड़ गये ?'

स्कूल की हरेक कक्षा के विद्यार्थियों ने ऐसा ही किया।

अंग्रेज अधिकारी बौखला गया और चिल्लाया : 'किसने ये सीख दी ?'

सब बच्चों से पूछा गया परंतु किसीने नाम नहीं बताया।

अधिकारी ने कहा : ''बच्चों को स्कूल से निकाल देंगे।''

बच्चे बोले : ''तुम क्या निकालोगे ? हम ही चले। जिस स्कूल में हम अपनी मातृभूमि की वंदना न कर सकें **'वंदे मातरम्'** न कह सकें - ऐसे स्कूल में हमें नहीं पढ़ना।''

उन दुष्ट अधिकारियों ने सोचा कि अब क्या करें ? फिर उन्होंने बच्चों के माँ-बाप पर दबाव डाला कि 'बच्चों को समझाओ, सिखाओ ताकि वे माफी माँग लें।'

केशव के माता-पिता ने कहा : ''बेटा ! माफी माँग लो।''

केशव : ''हमने कोई गुनाह ही नहीं किया तो माफी क्यों माँगे ?''

किसीने केशव से कहा : ''देश-सेवा की और लोगों को जगाने की बात इस उम्र में नहीं करो, अभी तो पढ़ाई करो।''

केशव : ''बूढ़े-बुजुर्ग और अधिकारी लोग मुझे

सिखाते हैं कि देश-सेवा बाद में करना। जो काम आपको करना चाहिए, वह आप नहीं कर रहे हैं इसलिए हम बच्चों को करना पड़ेगा। आप मुझे अक्ल देते हैं ? अंग्रेज हमें दबोच रहे हैं, हमें गुलाम बनाये जा रहे हैं तथा हिन्दुओं का धर्मान्तिरण कराये जा रहे हैं और आप चुप्पी साधे जुल्म सह रहे हैं ? आप जुल्म के सामने लोहा लेने का संकल्प करें तो मैं पढ़ाई में लग जाऊँगा, नहीं तो पढ़ाई के साथ देश की आजादी की पढ़ाई भी मैं पढूँगा और दूसरे विद्यार्थियों को भी मजबूत बनाऊँगा।''

आखिर बड़े-बूढ़े-बुजुर्गों को कहना पड़ा : 'यह भले १४ वर्ष का बालक लगता है लेकिन कोई होनहार है।' उन्होंने केशव की पीठ थपथपाते हुए कहा : ''शाबाश है, शाबाश !''

''आप मुझे शाबाशी तो देते हैं लेकिन आप भी जरा हिम्मत से काम लें। जुल्म करना तो पाप है लेकिन जुल्म सहना दुगना पाप है।''

केशव ने बूढ़े-बुजुर्गों को सरलता से, नम्रता से, धीरज से समझाया।

डेढ़ महीने बाद वह स्कूल चालू हुई। अंग्रेज शासक चौदह वर्षीय बालक का लोहा मान गये कि उसके आगे हमारे सारे षड्यंत्र विफल हो गये। उस लड़के के पाँच मित्र थे। वैसे ये पाँच मित्र रहते तो सभी विद्यार्थियों के साथ हैं, लेकिन अक्लवाले विद्यार्थी ही उनसे मित्रता करते हैं। वे पाँच मित्र कौन-से हैं ?

विद्या शौर्यं च दाक्ष्यं च बलं धैर्यं च पंचकम्।
मित्राणि सहजन्याहुः वर्तन्ति एव त्रिर्बुधाः ॥

विद्या, शूरता, दक्षता, बल और धैर्य - ये पाँच मित्र सबके पास हैं। अक्लवाले विद्यार्थी इनका फायदा उठाते हैं, लल्लू-पंजू विद्यार्थी इनसे लाभ नहीं उठा पाते।

केशव के पास ये पाँचों मित्र थे। वह शत्रु और विरोधियों को भी नम्रता और दक्षता से समझा-बुझाकर अपने पक्ष में कर लेता था।

एक बार नागपुर के पास यवतमाल (महा.) में केशव अपने साथियों के साथ कहीं टहलने जा रहा था। उस जमाने में अंग्रेजों का बड़ा दबदबा था। वहाँ का अंग्रेज कलेक्टर तो इतना सिर चढ़ गया था कि कोई भी उसको सलाम मारे बिना गुजरता तो उसे दण्डित किया जाता था।

सैर करने जा रहे केशव और उसके साथियों को वही अंग्रेज कलेक्टर सामने मिला। बड़ी-बड़ी उम्र के लोग उसे प्रणाम कर रहे थे। सबने केशव से कहा : ''अंग्रेज कलेक्टर साहब आ रहे हैं। इनको सलाम करो।''

उस १५-१६ वर्षीय केशव ने प्रणाम नहीं किया। कलेक्टर के सिपाहियों ने उसे पकड़ लिया और कहा : ''तू प्रणाम क्यों नहीं करता ? साहब तेरे से बड़े हैं।''

केशव : ''मैं इनको प्रणाम क्यों करूँ ? ये कोई महात्मा नहीं हैं वरन् सरकारी नौकर हैं। अगर अच्छा काम करते तो आदर से सलाम किया जाता, जोर-जुल्म से प्रणाम करने की कोई जरूरत नहीं है।''

सिपाही : ''अरे बालक ! तुझे पता नहीं, सभी लोग प्रणाम करते हैं और तू ऐसी बातें बोलता है ?''

कलेक्टर गुर्राकर देखने लगा। अंग्रेज कलेक्टर की तरफ प्रेम की निगाह डालते हुए केशव ने कहा : ''प्रणाम भीतर के आदर की चीज होती है। जोर-जुल्म से प्रणाम करवाना आपको शोभा नहीं देता। हृदय में आदर न हो तो झूठमूठ में प्रणाम करना पाप माना जाता है फिर आप मुझे क्यों जोर-जबरदस्ती करके पाप में डालते हो ? दिखावटी प्रणाम से आपको क्या फायदा होगा ?''

अंग्रेज कलेक्टर का सिर नीचा हो गया, बोला : ''इसको जाने दो, यह साधारण बालक नहीं है।''

१५-१६ वर्षीय बालक की कैसी दक्षता है कि दुश्मनी के भाव से भरे कलेक्टर को भी सिर नीचे करके कहना पड़ा : 'इसको जाने दो।'

यवतमाल में यह बात बड़ी तीव्र गति से फैल गयी और लोग वाहवाही करने लगे : 'केशव ने कमाल कर दिया ! आज तक जो सबको प्रणाम करवाता था, सबका सिर झुकवाता था, केशव ने उसीका सिर झुकवा दिया !'

पढ़ते-पढ़ते आगे चलकर केशव मेडिकल कॉलेज में भर्ती हुआ। मेडिकल कॉलेज में सुरेन्द्र घोष नामक एक बड़ा लंबा-तगड़ा विद्यार्थी था।

वह रोज 'पुलप्स' करता था और दण्ड-बैठक भी लगाता था। अपनी भुजाओं पर उसे बड़ा गर्व था, 'अगर एक घूँसा किसीको लगा दूँ तो दूसरा न माँगे।'

एक दिन कॉलेज में उसने केशव की प्रशंसा सुनी तो वह केशव के सामने गया और बोला :

''क्यों रे, तू बड़ा बुद्धिमान, शौर्यवान और धैर्यवान होकर उभर रहा है। है शूरता तो मुझे मुक्के मार, मैं भी तेरी ताकत देखूँ।''

केशव : ''नहीं-नहीं, भैया ! मैं आपको नहीं मारूँगा। आप ही मुझे मुक्के मारिये।'' ऐसा कहकर केशव ने अपनी भुजा आगे कर दी।

वह जो 'पुलप्स' करके, कसरत करके अपने शरीर को मजबूत बनाता था, उसने मुक्का मारा 'एक, दो, तीन... पाँच... पंद्रह... पच्चीस... तीस... चालीस...' मुक्के मारते-मारते आखिर सुरेन्द्र घोष थक गया, पसीने से तर-बतर हो गया। देखनेवाले लोग चकित हो गये ! आखिर सुरेन्द्र ने कहा :

''तेरा हाड़-मांस का शरीर है कि लोहे का ? सच बता, तू कौन है ? मुक्के मारते-मारते मैं थक गया पर तू 'उफ' तक नहीं करता है ?''

प्राणायाम का रहस्य जाना होगा केशवराव ने ! आत्मबल बचपन से ही विकसित था। दुश्मनी के भाव से भरा सुरेन्द्र घोष केशव का मित्र बन गया और गले लग गया।

कलकत्ता के प्रसिद्ध मौलवी लियाकत हुसैन ६० साल के थे और नेतागिरी में उनका बड़ा नाम था। नेतागिरी से उनको जो खुशियाँ मिलती थीं, उनसे वे ६० साल के होते हुए भी चलने, बोलने और काम करने में जवानों को भी पीछे कर देते थे।

मौलवी लियाकत हुसैन ने केशवराव को एक सभा में देखा। उस सभा में किसीने भाषण में लोकमान्य तिलक के लिए कुछ हलके शब्दों का उपयोग किया। देशभक्ति से भरे हुए लोकमान्य तिलक के लिए हलके शब्द बोलने और भारतीय संस्कृति को **'वंदे मातरम्'** करके निहारनेवाले लोगों को खरी-खोटी सुनाने की जब उसने बदतमीजी की तो युवक केशव उठा, मंच पर पहुँचा और उस वक्ता का कान पकड़कर उसके गाल पर तीन तमाचे जड़ दिये।

आयोजक तथा उनके आदमी आये और केशव का हाथ पकड़ने लगे। केशव ने हाथ पकड़नेवाले को भी तमाचे जमा दिये। केशव का यह शौर्य, देशभक्ति और आत्मनिर्भरता देखकर मौलवी लियाकत हुसैन बोल उठे :

''आफरीन है, आफरीन है ! भारत के लाल ! आफरीन है।''

लियाकत हुसैन दौड़ पड़े और केशव को गले लगा लिया, फिर बोले : ''आज से आप और हम जिगरी दोस्त ! मेरा कोई भी कार्यक्रम होगा उसमें मैं आपको बुलाऊँ तो क्या आप आयेंगे ?''

केशव : ''क्यों नहीं, भैया ! हम सभी भारतवासी हैं।''

जब भी लियाकत हुसैन कार्यक्रम करते, तब केशव को अवश्य बुलाते और केशव अपने साथियों सहित भगवाध्वज लेकर उनके कार्यक्रम में जाते। वहाँ **'वंदे मातरम्'** की ध्वनि से आकाश गूँज उठता था।

यह साहसी, वीर, निडर, धैर्यवान और बुद्धिमान बालक केशव और कोई नहीं - केशवराव बलिराम हेडगेवार ही थे, जिन्होंने आगे चलकर राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ (आर. एस. एस.) की स्थापना की; जिनके संस्कार आज दुनियाभर के बच्चों और जवानों के दिल तक पहुँच रहे हैं।

रात्रि में ९ से १२ बजे की नींद में एक घंटा ढाई घंटे का काम देता है, १२ से ३ बजे की नींद में १ घंटा २ घंटे का काम देता है, ३ से ६ बजे की नींद में १ घंटा डेढ़ घंटे का काम देता है और सूर्योदय के बाद १ घंटा सोने से दो घंटे खराब हो जाते हैं, ज्यादा थकान होती है। जो लोग सूर्योदय के बाद तक सोते रहते हैं, वे लोग अधिक बुद्धि और स्फूर्ति नहीं पा सकते। जो लोग जल्दी सोकर जल्दी उठते हैं, संयम और सात्त्विकता से जीते हैं उनमें गज़ब की स्फूर्ति होती है।

एकादशी माहात्म्य

[पुत्रदा एकादशी : १८ अगस्त २००२]

युधिष्ठिर ने पूछा : मधुसूदन ! श्रावण के शुक्लपक्ष में किस नाम की एकादशी होती है ? कृपया मेरे सामने उसका वर्णन कीजिये ।

भगवान श्रीकृष्ण बोले : राजन् ! प्राचीन काल की बात है । द्वापर युग के प्रारम्भ का समय था । माहिष्मतीपुर में राजा महीजित अपने राज्य का पालन करते थे किन्तु उन्हें कोई पुत्र नहीं था, इसलिए वह राज्य उन्हें सुखदायक नहीं प्रतीत होता था । अपनी अवस्था अधिक देख राजा को बड़ी चिन्ता हुई । उन्होंने प्रजावर्ग में बैठकर इस प्रकार कहा :

'प्रजाजनो ! इस जन्म में मुझसे कोई पातक नहीं हुआ है । मैंने अपने खजाने में अन्याय से कमाया हुआ धन नहीं जमा किया है । ब्राह्मणों और देवताओं का धन भी मैंने कभी नहीं लिया है । पुत्रवत् प्रजा का पालन किया है । धर्म से पृथ्वी पर अधिकार जमाया है । दुष्टों को, चाहे वे बन्धु और पुत्रों के समान ही क्यों न रहे हों, दण्ड दिया है । शिष्ट पुरुषों का सदा सम्मान किया है और किसीको द्वेष का पात्र नहीं समझा है । फिर क्या कारण है, जो मेरे घर में आज तक पुत्र उत्पन्न नहीं हुआ ? आप लोग इसका विचार करें ।'

राजा के ये वचन सुनकर प्रजा और पुरोहितों के साथ ब्राह्मणों ने उनके हित का विचार करके गहन वन में प्रवेश किया । राजा का कल्याण चाहनेवाले वे सभी लोग इधर-उधर घूमकर ऋषिसेवित आश्रमों की तलाश करने लगे । इतने में उन्हें मुनिश्रेष्ठ लोमशजी के दर्शन हुए ।

लोमशजी धर्म के तत्त्वज्ञ, सम्पूर्ण शास्त्रों के विशिष्ट विद्वान, दीर्घायु और महात्मा हैं । उनका शरीर लोम से भरा हुआ है । वे ब्रह्माजी के समान तेजस्वी हैं । एक-एक कल्प बीतने पर उनके शरीर का एक-एक लोम विशीर्ण होता है, टूटकर गिरता है, इसीलिए उनका नाम लोमश हुआ है । वे महामुनि तीनों कालों की बातें जानते हैं ।

उन्हें देखकर सब लोगों को बड़ा हर्ष हुआ । लोगों को अपने निकट आया देख लोमशजी ने पूछा : 'तुम सब लोग किसलिए यहाँ आये हो ? अपने आगमन का कारण बताओ । तुम लोगों के लिए जो हितकर कार्य होगा, उसे मैं अवश्य करूँगा ।'

प्रजाजनों ने कहा : ब्रह्मन् ! इस समय महीजित नामवाले जो राजा हैं, उन्हें कोई पुत्र नहीं है । हम लोग उन्हींकी प्रजा हैं, जिनका उन्होंने पुत्र की भाँति पालन किया है । उन्हें पुत्रहीन देख, उनके दुःख से दुःखित हो हम तपस्या करने का दृढ़ निश्चय करके यहाँ आये हैं । द्विजोत्तम ! राजा के भाग्य से इस समय हमें आपका दर्शन मिल गया है । महापुरुषों के दर्शन से ही मनुष्यों के सब कार्य सिद्ध हो जाते हैं । मुने ! अब हमें उस उपाय का उपदेश कीजिये, जिससे राजा को पुत्र की प्राप्ति हो ।

उनकी बात सुनकर महर्षि लोमश दो घड़ी के लिए ध्यानमग्न हो गये । तत्पश्चात् राजा के प्राचीन जन्म का वृत्तान्त जानकर उन्होंने कहा : 'प्रजावृन्द ! सुनो । राजा महीजित पूर्वजन्म में मनुष्यों को चूसनेवाला धनहीन वैश्य था । वह वैश्य गाँव-गाँव घूमकर व्यापार किया करता था । एक दिन ज्येष्ठ के शुक्लपक्ष में दशमी तिथि को, जब दोपहर का सूर्य तप रहा था, वह किसी गाँव की सीमा में एक जलाशय पर पहुँचा । पानी से भरी हुई बावली देखकर वैश्य ने वहाँ जल पीने का विचार किया । इतने में वहाँ अपने बछड़े के साथ एक गौ भी आ पहुँची । वह प्यास से व्याकुल और ताप से पीड़ित थी, अतः बावली में जाकर जल पीने लगी । वैश्य ने

पानी पीती हुई गाय को हाँककर दूर हटा दिया और स्वयं पानी पीने लगा। उसी पापकर्म के कारण राजा इस समय पुत्रहीन हुए हैं। किसी जन्म के पुण्य से इन्हें निष्कण्टक राज्य की प्राप्ति हुई है।'

प्रजाजनों ने कहा : मुने ! पुराणों में उल्लेख है कि प्रायश्चितरूप पुण्य से पाप नष्ट होते हैं, अतः ऐसे पुण्यकर्म का उपदेश कीजिये, जिससे उस पाप का नाश हो जाय।

लोमशजी बोले : प्रजाजनो ! श्रावण मास के शुक्लपक्ष में जो एकादशी होती है, वह 'पुत्रदा' के नाम से विख्यात है। वह मनोवांछित फल प्रदान करनेवाली है। तुम लोग उसीका व्रत करो।

यह सुनकर प्रजाजनों ने मुनि को नमस्कार किया और नगर में आकर विधिपूर्वक 'पुत्रदा एकादशी' के व्रत का अनुष्ठान किया। उन्होंने विधिपूर्वक जागरण भी किया और उसका निर्मल पुण्य राजा को अर्पण कर दिया। तत्पश्चात् रानी ने गर्भधारण किया और प्रसव का समय आने पर बलवान पुत्र को जन्म दिया।

इसका माहात्म्य सुनकर मनुष्य पापों से मुक्त हो जाता है तथा इहलोक में सुख पाकर परलोक में स्वर्गीय गति को प्राप्त होता है।

❊ कामना की निवृत्ति से होनेवाली स्थिति बड़ी उच्च कोटि की है। उस स्थिति में निर्विकल्पता आ जाती है, बुद्धि सम हो जाती है, जितेन्द्रियता प्राप्त हो जाती है। उसके प्राप्त होने पर मनुष्य स्वयं 'कल्पतरु' हो जाता है। जिसको लोग कल्पतरु कहते हैं उससे तो हित और अहित दोनों ही होते हैं। पर यह कल्पतरु तो ऐसा है, जिससे कभी किसीका भी अहित नहीं होता। इससे मनुष्य को योग, बोध और प्रेम प्राप्त होता है।

❊ किसी भी वस्तु को अपना न मानना त्याग है। त्याग से वीतरागता उत्पन्न होती है। राग की निवृत्ति होने पर सब दोष मिट जाते हैं। - आश्रम की पुस्तक 'दैवी संपदा' से

हृदयरोग

(पिछले माह का शेष)

लेप : १० ग्रा. उड़द की छिलकेवाली दाल रात को भिगोयें। प्रातः पीसकर उसमें गाय का ताजा मक्खन १० ग्राम, एरण्ड का तेल १० ग्राम, कूटी हुई गूगल धूप १० ग्राम मिलाकर पेस्ट बना लें। सुबह बायीं ओर हृदयवाले हिस्से पर लेप करके ३ घण्टे तक आराम करें। उसके बाद लेप हटाकर दैनिक कार्य कर सकते हैं। यह प्रयोग १ माह तक करने से हृदय का दर्द ठीक होता है।

गौझरण अर्क : हृदय की धमनियों में अवरोधवाले रोगियों को गौझरण अर्क के सेवन से हृदय के दर्द में राहत मिलती है। अर्क दो से छः ढक्कन तक समान मात्रा में पानी मिलाकर ले सकते हैं। सुबह खाली पेट व शाम को भोजन से पहले लें। हृदय-दर्द बन्द होकर चुस्ती-फुर्ती बढ़ती है तथा बेहद खर्चीली बाईपास सर्जरी से मुक्ति मिलती है। वृक्क (किडनी) की पथरी आदि से रक्षा होती है। टी.बी. और दमा का मूल कफ की जड़ें गौझरण अर्क उखाड़कर फेंक देता है। २० मि.ली. गौझरण अर्क या ४ गौझरण वटी पानी के साथ लेने से नाड़ी शुद्धि में मदद मिलती है। यह नमीवाले वातावरण में रहनेवाले सभी लोगों के लिए उपयोगी है।

पथ्य (खाना) : छिलकेवाले साबुत उबले हुए मूँग व मूँग की दाल, गेहूँ की रोटी, जौ का दलिया, परवल, करेला, प्याज, गाजर, अदरक, सोंठ, हींग, जीरा, कालीमिर्च, सेंधा नमक, अजवायन, अनार, मीठे अंगूर, काले अंगूर आदि।

अपथ्य (न खाना) : चाय, कॉफी, घी, तेल, मिर्च-मसाले, दही, पनीर, मावे (खोया) से बनी मिठाइयाँ, टमाटर, आलू, गोभी, बैंगन, मछली, अंडा, फास्टफूड, ठंडा बासी भोजन, भैंस का दूध, घी, फल, भिंडी।

टिप्पणी : अनुभव से ऐसा पाया गया है कि अधिकतर रोगी जिन्हें दिल का मरीज घोषित कर दिया जाता है, वे दिल के मरीज नहीं, अपितु वात प्रकोपजन्य सीने के दर्द के शिकार होते हैं । आई.सी.सी.यू. में दाखिल कई मरीजों को अंग्रेजी दवाइयों से नहीं, केवल संतकृपा चूर्ण, हिंगादिहरड़, शंखवटी, लवणभास्कर चूर्ण आदि वायु-प्रकोप को शांत करनेवाली औषधियों से लाभ हो जाता है तथा वे हृदयरोग होने के भ्रम से बाहर आ जाते हैं और स्वस्थ हो जाते हैं ।

[*साँईं श्री लीलाशाहजी उपचार केन्द्र के वैद्यगण, सूरत ।*]

मौन साधना

'मौन' आध्यात्मिक जीवन के लिए अत्यंत आवश्यक है । व्यर्थ बकवास में शक्ति का अपव्यय होता है । यदि मौन के द्वारा अपनी शक्ति को सुरक्षित रखा जाय तो वह ओज शक्ति में बदलकर ध्यान में सहायक होगी । अधिक न हो सके तो सप्ताह में एक दिन मौन अवश्य रखना चाहिए ।

यदि गंभीर ध्यान का अभ्यास या शीघ्र आत्म-साक्षात्कार करना चाहते हो तो ये पाँच बातें आवश्यक हैं : १. मिताहार २. मौन ३. एकांतवास ४. सद्गुरु-संपर्क ५. शीतल जलवायु ।

वाक् इन्द्रिय माया का सबल अस्त्र है । इसके कारण मन विक्षिप्त होता है, झगड़े व युद्ध भी हो जाते हैं । इस इन्द्रिय को नियंत्रित करना माने आधा मन नियंत्रित कर लेना । मौन से वाणी के आवेगों का नियंत्रण, संकल्पबल की वृद्धि, शक्तिसंचय तथा आत्मबल की वृद्धि होती है । यह क्रोध का दमन करता है, व्यर्थ के संकल्पों को रोकता है; मन को शांति प्रदान करता है । इससे व्यक्ति का चिड़चिड़ापन बन्द हो जाता है । वाणी प्रभावशाली हो जाती है । पीड़ा के समय मौन रखने से मन को शांति मिलती है । इससे मानसिक तनाव दूर होते हैं । शारीरिक तथा मानसिक कार्यक्षमता बढ़ जाती है । मस्तिष्क व स्नायुओं को विश्रांति मिलती है ।

आध्यात्मिक उत्थान के लिए मौन व्रत अवश्य करना चाहिए । भोजन मौन होकर करना चाहिए । 'जो बातें करते हुए भोजन करता है वह मानो, पाप खाता है ।' (पद्मपुराण) 'हूँ... हूँ... हूँ...' - करके बोलना तो बोलने से भी बुरा है, इससे तो शक्ति का अधिक अपव्यय होता है ।

नया जीवन मिला...

पूज्यपाद सद्गुरुदेव के श्रीचरणों में कोटि-कोटि प्रणाम...

मुझे सन् १९९६ से हृदयरोग ने परेशान कर रखा था । जून २००० में तबियत अत्यंत गंभीर हो गयी और आंध्रप्रदेश के 'श्री सत्य साँईं अस्पताल' में ऑपरेशन करवाना पड़ा जो कि डॉक्टरों की पूरी कोशिश के बावजूद फेल हो गया ।

२३ जुलाई को हम नासिक आ गये । तकलीफ बहुत बढ़ चुकी थी । मैं न तो ठीक तरह से बोल पाता था और न ही साँस ले पाता था ।

नासिक के 'राजेबहादूर हार्ट फाऊंडेशन' में दिखाने पर वहाँ के डॉक्टरों ने कहा कि ऑपरेशन सही नहीं हुआ है । दूसरा ऑपरेशन तुरंत करवाना पड़ेगा, नहीं तो कुछ भी हो सकता है । ऑपरेशन का खर्च था १,८०,००० रुपये ।

पहले ऑपरेशन के बाद ही छाती में इतनी भयंकर पीड़ा थी कि मैं हिम्मत हार चुका था... मैं दूसरा ऑपरेशन करवाता ऐसी न तो मेरी मनःस्थिति थी और न ही परिस्थिति ।

अगस्त २००० में घर पर ही बिस्तर पर विश्राम कर रहा था । छाती कि पीड़ा इतनी असहनीय हो उठी कि आत्महत्या करने का विचार मन में आ गया । किसीसे जिक्र तो कर ही नहीं सकता था ।

एक रात्रि को यह विचार करके ही लेटा था कि आज दुनिया से अलविदा ले लूँगा । इतने में मेरे हाथ में ४-५ ऋषि प्रसाद पत्रिका आ गयी, जिसे लेने के लिए एक साधक भाई (श्री सीताराम गुप्ता)

ने प्रोत्साहित किया था। मैं उन्हें हाथ में लेकर देख रहा था, नजर स्थिर हो रही थी। इतने में कब मध्यरात्रि बीत गयी पता भी न चला और मुझे नींद आ गयी।

उसी रात्रि में पूज्य सद्गुरुदेव ने मुझे साक्षात् दर्शन दिये हालाँकि तब तक न मैंने पूज्य सद्गुरुदेव को देखा था और न ही उनकी किसी तसवीर को... बस, केवल ऋषि प्रसाद की तसवीर ही देखी थी। पूज्य गुरुदेव ने मुझे हिलाया और कहा : ''बेटे ! उठ और सत्य में सार रख।''

इतना कहकर वे अदृश्य हो गये। मेरी नींद उड़ चुकी थी तथा घर एक दिव्य सुगंध से भर चुका था, तब सुबह के चार बजे थे। प्रातःकाल मुझे ऐसा लगा मानो, मेरा नया जन्म हो चुका है।

आज मुझे हृदय की कोई पीड़ा परेशान नहीं कर रही है ! आज मुझे देखकर कोई ऐसा नहीं कह सकता है कि यह 'हार्ट पेशेंट' है।

डॉक्टरों ने जिस हार्ट का दूसरा ऑपरेशन तुरंत कराने के लिए कहा था, वही हार्ट अभी तक ठीक से चल रहा है और आगे भी चलेगा...

यह गुरुदेव की अहैतुकी कृपा का ही चमत्कार नहीं तो और क्या है ?

- श्री रवि अनंत क्षीरसागर, पंचवटी, नासिक (महा.).

आप जो भी कार्य करो यज्ञार्थ भावना से करो, ईश्वर से नाता जोड़ने के लिए करो, दूसरों का कल्याण करने की भावना से करो, अपनी वासनाएँ निवृत्त करके जीवन को निर्मल बनाने के हेतु से करो। जो कर्म भोगबुद्धि से, स्वार्थबुद्धि से, राग-द्वेष से प्रेरित होकर, ईर्ष्या के कारण से, दूसरों को नीचा दिखाने के उद्देश्य से किये जाते हैं वे कर्म कर्त्ता को बाँधनेवाले हैं। दूसरों को सताकर ऐश-आराम पाने के लिए जो कर्म किये जाते हैं वे जीव को निम्न गति में ले जाते हैं। 'सबमें मेरा ही नारायण स्वरूप विलास कर रहा है' - ऐसी मंगल भावना से जो व्यवहार होता है वह परम मांगल्य के द्वार खोल देता है। - आश्रम की पुस्तक 'मुक्ति का सहज मार्ग' से

आवश्यक सूचना

श्री आसारामायण के जप-पाठ, विडियो सत्संग, भजन-कीर्तन कोई भी कर सकता है। इसमें समिति के अध्यक्ष या अन्य किसी का हस्तक्षेप मान्य नहीं होगा।

'गुरु पूर्णिमा' देश-विदेश में रहनेवाले लाखों शिष्यों के लिए पूरे वर्ष का सबसे बड़ा पर्व है, गुरु पर्व है। पूरे वर्ष के सारे पुण्य पर्व मनाने का सम्पूर्ण फल व्यास पूर्णिमा मनाने से मिल जाता है। गुरु का प्रेमी लघु (सांसारिक वस्तुओं) का मोही नहीं होता। आज के पावन दिवस पर शिष्य अपने सद्गुरु के श्रीचरणों में उपस्थित होकर गत वर्ष की अपनी साधना का लेखा-जोखा लगाता है। अपनी कमियों को दूर करने तथा साधना में उन्नति के लिए नये संकल्प लेता है। शिष्यों की अधिक संख्या को देखते हुए इस वर्ष पूज्यश्री के सान्निध्य में दिल्ली, इंदौर (म.प्र.) तथा अमदावाद (गुज.) इन तीन स्थानों पर 'गुरु पूर्णिमा महोत्सव' आयोजित किया गया। इसके अलावा देश-विदेश के साधकों ने अपने-अपने इलाके के आश्रमों में इस महोत्सव को श्रद्धा और उत्साह से मनाया।

रजोकरी (दिल्ली) में १२ से १४ जुलाई तक गुरुभक्तों ने सद्गुरु के दर्शन और पूजन कर अनुपम आत्मसंतोष पाया। 'गुरुदेव की एक नजर मिल जाय' - यही पिपासा लिये साधक घंटों तितिक्षा सहन करते हुए, लंबी पंक्ति में, लंबे इंतजार के बाद व्यासपीठ तक पहुँचते और पूज्यश्री की अमीदृष्टि पाकर कृतकृत्यता का अनुभव करते थे। राजधानी दिल्ली में नवनिर्मित 'रजोकरी आश्रम' का उद्घाटन हुआ।

'आध्यात्मिक ज्ञान प्रतियोगिता २००२' के सफल विद्यार्थियों में पुरस्कार वितरित किये गये। पूज्यपाद बापूजी ने युवापीढ़ी में आध्यात्मिक संस्कारों के पुनर्जागरण हेतु वर्ष २००३ में 'आध्यात्मिक ज्ञान प्रतियोगिता' के पुनः आयोजन की स्वीकृति प्रदान की।

इन्दौर (म.प्र.) आश्रम में १८ से २० जुलाई तक गुरु पूर्णिमा का पर्व मनाया गया। गुरुदर्शन की तीव्र आकांक्षा... घंटों पंक्ति में खड़े रहना... फिर भी उबान नहीं, थकान नहीं... भूख-प्यास की चिंता नहीं... बल्कि चित्त और चेहरे पर त्याग तथा तप की झलक... इस भाव की गहनता को प्रत्यक्ष रूप से निहारनेवाला ही समझ सकता है।

धन्य है हमारा भारतवर्ष ! जहाँ इस घोर कलियुग में भी ऐसे सद्गुरु और शिष्य उपलब्ध हैं।

अमदावाद (गुज.) २२ से २५ जुलाई : अमदावाद में अब तक आयोजित 'गुरु पूर्णिमा महोत्सव' की तुलना में इस वर्ष सबसे अधिक भीड़ रही, साथ ही सबसे अच्छी व्यवस्था

भी। बिलासपुर, रायपुर, राजनांदगाँव (छत्तीसगढ़), प्रकाशा (महा.) आदि स्थानों से बड़ी संख्या में गुरुभक्त पैदल यात्रा करते, प्रभुगीत गाते हुए गुरु पूर्णिमा के दिन आश्रम पहुँचे।

'बाल संस्कार केन्द्र, रायपुर' के बच्चे तो १२०० कि.मी. की लंबी पदयात्रा कर इस पुनीत पर्व पर पहुँचे।

भक्तों की भावना की कद्र करते हुए वर्त्तमान गुजरात सरकार व पुलिस विभाग ने सूझबूझ व सुंदर कर्त्तव्यपरायणता का परिचय दिया, जिससे भक्तों के मन में वर्त्तमान सरकार की कार्यदक्षता की अच्छी छाप पड़ी।

गुरु पूर्णिमा के पावन पर्व पर नवनिर्मित सत्संग भवन का उद्घाटन हुआ। पूज्यश्री की अमृतवाणी पर आधारित विभिन्न भाषाओं में प्रकाशित हिन्दी में २ (एकादशी व्रत कथाएँ और गुरु पूर्णिमा संदेश, कुल मूल्य रु. ६), गुजराती में ४ (एकादशी व्रत कथाएँ, समता साम्राज्य, सद्‌गतने श्रद्धांजलि और गुरु पूर्णिमा संदेश, कुल मूल्य रु. १६), मराठी में ७ (एकादशी व्रत कथाएँ, परम तप, जीवन विकास, संत अवतरण बड़ी व छोटी, बाल संस्कार और गुरु पूर्णिमा संदेश, कुल मूल्य रु. ३२) तथा उड़िया में ४ (बाल संस्कार, गुरु आराधनावली, प्रभु ! परम प्रकाश की ओर ले चल और श्रीमद्भगवद्गीता कुल मूल्य रु. ३०.५०) पुस्तकों का तथा निम्नलिखित ऑडियो कैसेट - ज्ञान ही ज्ञान भाग १ से १०, जो कि पूज्यश्री के एकांतवास के दौरान किये गये तात्त्विक प्रवचन का दुर्लभ संग्रह है, भक्ति सुधा, अमृत सागर, भक्ति संजीवनी। विडियो कैसेट - सच्चा धनवान, ध्यान में ज्ञानवर्षा, ज्ञान की गंगा, सभीकी शीघ्र उन्नति, हरि सम जग कछु वस्तु नहीं, ॐकार की दिव्य शक्तियाँ, लक्ष्य न ओझल होने पाये तथा विडियो सी.डी. - मन का इलाज, माँ-बाप को भूलना नहीं, सच्चा धनवान, यार की मौज, कैसा है यह ब्रह्म, सुयशा : ''कब सुमिरोगे राम ?'' का विमोचन हुआ। ये पहले की अपेक्षा और भी कम दामों में साधकों को मिलें ऐसी व्यवस्था भी की गयी।

गुरु पूर्णिमा का पवित्र दिन... मन्वन्तर का आदि दिवस, महर्षि कृष्णद्वैपायन वेदव्यास का जन्मदिवस, पंचम वेद महाभारत की रचना का प्रारंभ दिन और संन्यासियों के चतुर्मास व्रत का आरंभ दिवस है। वे इस दिन से कहीं ४ मास, कहीं दो मास तक एक स्थान पर रहकर ब्रह्मसूत्र आदि ग्रंथों का अभ्यास करते हैं, आध्यात्मिक पूँजी एकत्रित करते हैं।

साधकों को चतुर्मास में पालनीय नियम बताते हुए सद्‌गुरुदेव ने कहा... इन दिनों ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करें, आध्यात्मिक उन्नति के लिए यथायोग्य कोई-न-कोई नियम अवश्य लें। इन दिनों जठरामांद्यवाले हलका भोजन व वायु की तकलीफवाले तिल के तेल का उपयोग करें। सावन में हरी पत्तीवाले शाक व भादों में दही का परहेज करें।

विशाल संख्या में उपस्थित शिष्य-समुदाय... चित्त में गुरुदर्शन की प्रसन्नता, हृदय में गुरु के प्रति स्नेह, नयनों में गुरुभक्ति की उछलती प्रेम-तरंग... गुरुदेव के मार्गदर्शन से उपलब्ध शांति, आनंद और अभिवादन के भाव... गुरु-शिष्य परंपरा की ऐसी अद्भुत और अनुपम झाँकी 'गुरु पूर्णिमा महोत्सव' में देखने को मिली। जिन आँखों ने यह झाँकी रू-बरू देखी वे आँखें भी धन्य हैं।

२२ अगस्त : व्रत पूर्णिमा-नारियली पूर्णिमा-रक्षाबंधन-हयग्रीव जयंती
३१ अगस्त : श्रीकृष्ण जन्माष्टमी

❊ आत्मा निश्चय ही प्रत्येक के प्रत्यक्ष अनुभव में है किन्तु उस रूप में नहीं, जैसा किसीकी कल्पना में है। वह केवल यथावत् है। यह अनुभव समाधि है। जिस प्रकार अग्नि सामान्यतः दहन करती है लेकिन मन्त्र-शक्ति तथा अन्य विधियों से दाहक गुण से रहित हो जाती है, इसी प्रकार आत्मा वासनाओं से आवृत्त रहती है तथा वासनारहित अवस्था में स्वयं को प्रकट करती है। वासनाओं के घटने-बढ़ने के कारण ज्ञान को स्थिर होने में समय लगता है। अस्थिर ज्ञान पुनर्जन्म रोकने में समर्थ नहीं है। वासनाओं के साथ-साथ रहते ज्ञान स्थिर नहीं रह पाता। यह सत्य है कि महान गुरु के सान्निध्य में वासनाएँ क्रियाशील नहीं रहती हैं, मन शान्त हो जाता है और समाधि हो जाती है। जिस प्रकार अन्य विधियों से अग्नि दहन नहीं करती, उसी प्रकार गुरु के सामीप्य में शिष्य यथार्थ ज्ञान तथा वास्तविक अनुभव प्राप्त कर लेता है। इसमें दृढ़ रहने हेतु आगे प्रयासों की आवश्यकता है। वह अपने स्वयं का वास्तविक अस्तित्व जान लेता है और इस प्रकार अपने जीवन में ही मुक्त हो जाता है।

❊ महापुरुषों की दृष्टि पवित्र करती है। पवित्रता दृष्टि से नहीं देखी जा सकती। पत्थर कोयले के टुकड़े को जलने में समय लगता है, लकड़ी का कोयला कम समय में जल जाता है तथा बारूद की ढेरी तुरन्त ही धधक उठती है। यही स्थिति भिन्न-भिन्न श्रेणियों के व्यक्तियों के साथ है जो महात्माओं के सम्पर्क में आते हैं।

- रमण महर्षि, पुस्तक 'रमण महर्षि से बातचीत' पृष्ठ : १३५, १४८.

अमदावाद आश्रम में सम्पन्न हुआ गुरुपूनम का पर्व
नये विशाल पंडाल में बैठे, सन्मुख गुरु के भक्त सर्व...

गुरु दर्शन की लंबी कतारें, भक्त पहुँचे गुरु के द्वारे।
गुरु सँभारे गुरु ही सँवारे, गुरु नाम के हो जय जयकारे ॥

साबरमती नदी के विशाल तट पर आश्रम के विशाल पंडाल और मैदान में
बिठाने पर भी वही लंबी कतारें और वही लंबी इंतजारी !

R.N.I. NO. 48873/91 REGISTERED NO. GAMC/1132/2002 LICENSED TO POST WITHOUT PRE-PAYMENT LICENCE NO. 207. POSTING FROM AHMEDABAD 2-10 OF EVERY MONTH.
BYCULLA STG. WITHOUT PRE-PAYMENT LICENCE NO. 236. REGD. NO. TECH/47 833/MBI/2002 POSTING FROM MUMBAI 9-10 OF EVERY MONTH.